All Subject to Patiala Jurisdiction.

साप्ताहिक कृषि समाचार-पत्र

खेती संदेश

मूल्य : 6/- रुपए

Postage Registered No. PB/PTA/0339/2025-2027

WEEKLY KHETI SANDESH

E-mail : khetisandesh2025@gmail.com

Chief Editor : Parminder Kaur • RNI - PBBIL/25/A0210 • Issue Dt. 13-07-2026 • Vol.2 No.28 • H.O. : # 9-A, Ajit Nagar, Patiala-147001 (Pb.) • M. 90410-14575 • Page 12

ग्वार उत्पादन की उन्नत कृषि तकनीक

कीटों व रोगों की पहचान और नियंत्रण करके अच्छी पैदावार कैसे लें

डॉ. रघुबीर सिंह कालीरामणां, खण्ड कृषि अधिकारी, बरवाला (हिसार),
कृषि एवं किसान कल्याण विभाग, पंचकूला (हरियाणा)

ग्वार का शाब्दिक अर्थ गाय आहार होता है, अर्थात् प्राचीन काल में इस फसल की उपयोगिता चारा मात्र में ही थी, परन्तु वर्तमान में बदली परिस्थितियों में यह एक अति महत्वपूर्ण औद्योगिक फसल बन गई है। ग्वार के दानों से निकलने वाले गोंद के कारण इसकी खेती बीजोत्पादन के लिए करना आर्थिक रूप से ज्यादा फायदेमंद हो सकता है। देश के पश्चिमी भाग के शुष्क और अर्ध-शुष्क क्षेत्रों में किसानों की आय बढ़ाने के लिए ग्वार एक अति महत्वपूर्ण फसल है। यह सूखा सहन करने के अतिरिक्त अधिक तापक्रम को भी सह लेती है। भारत में ग्वार की खेती प्रमुख रूप से राजस्थान, पंजाब, हरियाणा, गुजरात व उत्तर प्रदेश में की जाती है। हमारे देश के सम्पूर्ण ग्वार उत्पादक क्षेत्र का करीब 87.7 प्रतिशत क्षेत्र राजस्थान में है। सब्ज़ी वाली ग्वार की फसल से बुवाई के 55-60 दिनों बाद कच्ची फलियां तुड़ाई पर आ जाती हैं। इसके अलावा ग्वार के दानों और ग्वार चूरी को पशुओं के खाने और प्रोटीन की आपूर्ति के लिए भी प्रयोग किया जाता है। ग्वार की फसल वायुमंडलीय नाइट्रोजन का भूमि में स्थिरीकरण करती है। अतः ग्वार ज़मीन की ताकत बढ़ाने में भी उपयोगी है। फसल-चक्र में ग्वार के बाद ली जाने वाली फसल की उपज हमेशा बेहतर मिलती है। इसी कारण गुजरात और राजस्थान के किसान, ग्वार के बाद खाद्यान्न या मोटे अनाज की फसल लेते हैं। व्यावसायिक जागरूकता एवं अंतर्राष्ट्रीय बाज़ार में इसकी बढ़ती मांग और आसमान छूती कीमतों के कारण किसान भाई इसके उत्पादन पर ज़ोर दे रहे हैं। परन्तु ग्वार की खेती के संबंध में वैज्ञानिक जानकारी ना मिलने के कारण, किसानों को इसका पूरा लाभ नहीं मिल रहा है।

औद्योगिक फसल : ग्वार एक बहु-उपयोगी फसल है। भारत प्रति वर्ष हज़ारों टन ग्वार विदेशों को निर्यात करता है, जिससे बहुमूल्य विदेशी मुद्रा का भंडार बढ़ता है। ग्वार का आयात करने वाले देशों में अमेरिका, इंग्लैण्ड, जर्मनी, जापान आदि शामिल हैं। कागज़ निर्माण के समय ग्वार गम को लुगदी में मिलाया जाता है, जिससे कागज़ ठीक से फैल सके और अच्छी गुणवत्ता का कागज़ तैयार किया जा सके। कपड़ा उद्योग में यह मांडी लगाने के उपयोग में लाया जाता है। श्रृंगार वस्तुओं जैसे लिपिस्टिक, क्रीम, शैम्पू और हैण्ड लोशन में भी ग्वार गम का प्रयोग किया जाता है। इसके अलावा दन्त मंजन, शेविंग क्रीम जैसी वस्तुओं के निर्माण में भी ग्वार गम का प्रयोग होता है। ग्वार गम का प्रयोग विस्फोटकों को जलामेथ करने में तथा तेल ड्रिलिंग उद्योगों में डाट लगाने के लिए भी महत्वपूर्ण है। ग्वार हरियाणा व राजस्थान के पश्चिम प्रदेश की अति महत्वपूर्ण फसल है। अतः किसान भाईयों को उन्नत कृषि तकनीक से ग्वार उत्पादन करना चाहिए, ताकि उन्हें फसल से अधिक से अधिक लाभ मिल सके।

ग्वार की पैदावार में कमी के प्रमुख कारण : दलहनी फसल होने के कारण मृदा उर्वरता बढ़ाने में भी सहायक है, जिसका खाद्यान्न व बागवानी वृक्षों की वृद्धि और विकास पर भी अनुकूल प्रभाव पड़ता है।

खेत की तैयारी : ग्वार की भरपूर पैदावार के लिए एक जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से और दो जुताईयां ट्रैक्टर चलित कल्टीवेटर से करें। प्रत्येक जुताई के बाद पाटा अवश्य लगाएं, जिससे मृदा नमी संरक्षित रहे। जुताई जून के द्वितीय पखवाड़े में करनी चाहिए। इस प्रकार तैयार खेत में खरपतवार कम पनपते है। साथ ही वर्षा जल का अधिक संचय होता है। इसी समय पूर्णतया सड़ी हुई गोबर की खाद सम्पूर्ण खेत में बिखेर कर अच्छी तरह मिट्टी में मिला दें।

बुवाई का समय : वर्षा ऋतु की फसल की बुवाई के लिए जून-जुलाई उपयुक्त समय है। वर्षा आधारित क्षेत्रों में जुलाई में वर्षा आगमन के साथ ही ग्वार की बुवाई कर देनी चाहिए। ग्वार की बुवाई मध्य अगस्त तक की जा सकती है। प्रकाश असंवेदनशील प्रजातियों के विकास और उनकी उपलब्धता के कारण ग्वार की खेती जायद में भी आसानी से की जा सकती है।

ग्वार के दानों से निकलने वाले गोंद के कारण इसकी खेती बीजोत्पादन के लिए करना आर्थिक रूप से ज्यादा फायदेमंद हो सकता है। देश के पश्चिमी भाग के शुष्क और अर्ध-शुष्क क्षेत्रों में किसानों की आय बढ़ाने के लिए ग्वार एक अति महत्वपूर्ण फसल है। यह सूखा सहन करने के अतिरिक्त अधिक तापक्रम को भी सह लेती है। भारत में ग्वार की खेती प्रमुख रूप से राजस्थान, पंजाब, हरियाणा, गुजरात व उत्तर प्रदेश में की जाती है।

बीज की मात्रा : ग्वार के बीज की मात्रा इस बात पर निर्भर करती है कि उसे किस उद्देश्य के लिए उगाया जा रहा है। दाने एवं हरी फलियों के लिए 6-8 किलोग्राम, हरी खाद वाली फसल के लिए 12-15 किलोग्राम तथा चारे वाली फसल के लिए 12-16 किलोग्राम बीज प्रति एकड़ पर्याप्त होता है।

बीजोपचार : बीजों के अच्छे जमाव व फसल को रोग मुक्त रखने के लिए ग्वार के बीजों को सबसे पहले 2 ग्राम बाविस्टिन या कैप्टान नामक फफूंदीनाशक दवा से प्रति किलो बीज की दर से अवश्य उपचारित करें। पौधों की जड़ों में गांठों का अधिक निर्माण हो व वायुमंडलीय नाइट्रोजन का भूमि में अधिक यौगिकीकरण हो, इसके लिए बीजों को राइज़ोबियम नामक जीवाणु उर्वरक से उपचारित करना बहुत ज़रुरी है। बीज उपचार बुवाई के ठीक पहले कर लेना चाहिए। एक हैक्टेयर क्षेत्र में बुवाई हेतु राइज़ोबियम जीवाणु के 200 ग्राम के दो पैकेट पर्याप्त होते है। किसान भाई ध्यान रखें कि यदि उन्होंने बीज किसी विश्वसनीय संस्था से खरीदा है, तो उसे फफूंदीनाशक दवा से उपचारित करने की आवश्यकता नहीं है। यह बीज पहले से ही उपचारित होता है।

बुवाई की विधि : अधिक पैदावार के लिए ग्वार की बुवाई हमेशा पंक्तियों में करें। बुवाई हल के कूंडों में अथवा सीडड्रिल की सहायता से करें। कूंडों में पौधों की जड़ों के पास वर्षा जल भी अधिक संग्रहित होता है। इससे पैदावार अधिक मिलती है और फसल की देखभाल करने में भी आसानी रहती है। भरपूर पैदावार हेतु पंक्ति से पंक्ति की दूरी 30 सैंटीमीटर तथा पौधे से पौधे की दूरी 15 सैंटीमीटर आदर्श मानी जाती है। बुवाई के समय भूमि में पर्याप्त नमी होनी चाहिए,

जिससे बीज का जमाव शीघ्र व पर्याप्त मात्रा में हो सके। बुवाई पूर्व-पश्चिम दिशाओं में करें, जिससे सभी पौधों को सूर्य का प्रकाश पर्याप्त मात्रा में और लम्बी अवधि तक मिलता रहे। किसान भाईयों को सलाह दी जाती है कि बुवाई कभी भी छिटकवां विधि से ना करें। इसमें समय तो कम लगता है, परन्तु उपज काफी कम मिलती है। जिन क्षेत्रों में जल निकास की समस्या रहती है, वहां जलभराव होने पर पानी को तुरंत खेत से बाहर निकाल दें। संघन विधि की दशा में अंकुरण के 10-12 दिन बाद अतिरिक्त व कमज़ोर पौधों को निकाल देना चाहिए।

1. ग्वार की अधिकांश खेती वर्षा आधारित क्षेत्रों में की जाती है। जहां पर इसकी पैदावार वर्षा की मात्रा व वितरण पर निर्भर करती है। सितम्बर माह में ग्वार में फलियां बनती है और उनमें दाने बनते हैं। इस समय प्रायः वर्षा की कमी के कारण पैदावार में भारी गिरावट आ जाती है।

2. ग्वार को साधारणतः उन भूमियों में उगाया जाता है, जहां पर दूसरी फसलें उगाना कठिन है। इन भूमियों की फसल पैदा करने की क्षमता बहुत कम होती है। साथ ही जीवांश पदार्थों की भी इन मृदाओं में काफी कमी होती है।

3. उच्च तकनीकी एवं उन्नतशील शीघ्र पकने वाली प्रजातियों का अभाव। अभी तक किसान खेती की परम्परागत विधियों और देशी प्रजातियों को ही उगाते है।

4. ग्वार की खेती में किसान आमतौर पर खाद, जैविक उर्वरक एवं उर्वरक प्रबंधन को नज़र-अंदाज करते हैं।

5. किसानों को पर्याप्त मात्रा में उन्नतशील प्रजातियों का प्रमाणित बीज नहीं मिल पाता है।

6. किसानों में व्याप्त निर्धनता व साक्षरता का अभाव भी ग्वार की उत्पादकता को प्रभावित करता है।

उन्नत कृषि तकनीक

खेत की तैयारी : ग्वार की फसल लगभग सभी तरह की भूमि में ली जा सकती है, परन्तु क्षारीय तथा जिस भूमि पर पानी ठहरता हो, इसके लिए उपयुक्त नहीं है। मई माह में खेत को एक से दो गहरी जुताई कर छोड़ देना चाहिए।

मौनसून की प्रथम वर्षा के साथ एक-दो जुताई कर पाटा लगा कर खेत तैयार करना चाहिए। मौनसून पूर्व खेत में गोबर की खाद चार-पांच ट्रोली प्रति हैक्टेयर की दर से अच्छी तरह बिछा लें। बुवाई से पूर्व खेत खरपतवार रहित तथा पर्याप्त नमी युक्त होना चाहिए।

क्रमशः

मूंगफली की प्रमुख बीमारियां एवं उनका समेकित प्रबंधन

लक्ष्मण प्रसाद बलाई, पूजा सुनिया व राकेश गुर्जर, पादप व्याधि विज्ञान विभाग, कृषि महाविद्यालय, फतेहपुर–शेखावाटी, सीकर, राजस्थान (श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर) एवं सागर मल खारडिया, कृषि विश्वविद्यालय, कोटा

मूंगफली (एराचिस हाइपोगिया एल.) भारत की एक महत्वपूर्ण तिलहन फसल है। इसका उत्पादन खाद्य तेल प्राप्त करने के उद्देश्य से किया जाता है। इसकी खेती भारत के कई राज्यों, जिसमें गुजरात, राजस्थान, तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश, कर्नाटक एवं महाराष्ट्र इसके प्रमुख उत्पादक राज्य है। राजस्थान में मूंगफली उगाने वाला प्रमुख जिले बीकानेर, चूरू, दौसा, जयपुर, नागौर, सीकर और उदयपुर हैं। किसान भाई मूंगफली की खेती कर अच्छा मुनाफा अर्जित कर रहे है। मूंगफली की फसल अनेक फफूंदजनित, जीवाणुजनित एवं विषाणुजनित रोगों से प्रभावित होती है, जिससे उपज एवं गुणवत्ता में उल्लेखनीय कमी आती है। कई बार रोगों के तीव्र प्रकोप से 30 से 70 प्रतिशत तक उत्पादन हानि हो सकती है। अतः रोगों की समय पर पहचान तथा रोग प्रबंधन अपनाकर इनसे होने वाली क्षति को प्रभावी रूप से कम किया जा सकता है। मूंगफली की प्रमुख बीमारियों, उनके लक्षणों तथा वैज्ञानिक प्रबंधन उपायों का वर्णन किया गया है।

1. टिक्का रोग

रोगकारक : मूंगफली का यह एक मुख्य रोग है। यह रोग अर्ली लीफ स्पॉट (सर्कोस्पोरा अराचिडीकोला) या लेट लीफ स्पॉट (सर्कोस्पोरा परसोनाटा) नामक कवक से होता हैं।

लक्षण : बुवाई के 30 से 60 दिन बाद दिखाई देता है। सर्वप्रथम रोग के लक्षण पत्तियों की ऊपरी सतह पर हल्के धब्बे के रूप में दिखाई देते है, इन धब्बों की ऊपरी सतह वाले ऊतकक्षीय क्षेत्र लाल भूरे से काले जबकि निचली सतह के क्षेत्र हल्के भूरे रंग के होते हैं। पत्तियों पर छोटे गोल भूरे या काले धब्बे बनते है। धब्बों के चारों ओर पीला घेरा दिखाई देता है। जिसके कारण वह शीघ्र ही पकने के पूर्व गिर जाती है। परिणामस्वरूप पौधों से फलियां बहुत कम और छोटी प्राप्त होती है, जिससे उपज घट जाती है।

प्रबंधन : * रोगरोधी किस्मों का प्रयोग करें।

* मूंगफली की खुदाई के तुरंत बाद फसल अवशेषों को एकत्र करके जला देना चाहिए।

* मूंगफली की फसल के साथ ज्वार या बाजरा की अंतवर्ती फसलें उगायें ताकि रोग के प्रकोप को कम किया जा सकें।

* बीजों को थायरम 3 ग्राम या कैप्टान 2.5 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित करके बोएं।

* रोग दिखाई देने पर कार्बेन्डाजिम 0.1 प्रतिशत या मेंकोजेब 0.25 प्रतिशत का 2–3 बार 15 दिन के अंतराल पर छिड़काव करें।

2. रस्ट या गेरुआ रोग :

रोगकारक : यह पक्सिनिया अरॉचिडिस नामक फफूंद से होता है।

लक्षण : इस रोग के लक्षण सर्वप्रथम पत्तियों की निचली सतह पर जंग के सामान उतकक्षीय स्पॉट या नारंगी-भूरे रंग के छोटे-छोटे उभरे हुए धब्बे (पस्ट्यूल) रूप में दिखाई पड़ते हैं। पत्तियों के प्रभावित भाग की बाह्य त्वचा फट जाती हैं। पर्णवृन्त एवं वायवीय भाग पर भी ये स्पॉट देखे जा सकते हैं। रोग उग्र होने पर पत्तियां झुलसकर गिर जाती हैं। फल्लियों के दाने चपटे व विकृत हो जाते हैं।

प्रबंधन : * समय पर बुवाई करें।

* फसल की बुवाई जून के मध्य पखवाड़े तक करें ताकि रोग का प्रकोप कम हों।

* मूंगफली की खुदाई के तुरंत बाद फसल अवशेषों को एकत्र करके जला देना चाहिए।

* रोगग्रस्त पौधों को निकाल कर नष्ट कर दें।

* बीज को 2 ग्राम प्रति किलोग्राम दर से वीटावेक्स या प्लांटवेक्स दवा से बीजोपचार करके बोएं।

* खड़ी फसल में घुलनशील गंधक चूर्ण 15 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर की दर से भुरकाव या हैक्सा-कोनाजोल 0.1 प्रतिशत या कार्बेन्डाजिम 0.5 प्रतिशत या मैनकोजेब 0.25 प्रतिशत की दर से 15 दिन के अंतराल में छिड़कें।

3. श्याम व्रण या ऐन्थ्रक्नोज

रोगकारक : कोलेटोट्राइकम ग्लोओस्पोरोइड्स

लक्षण : यह रोग मुख्यत: बीज पत्र, तना, पर्णवृन्त, पत्तियों तथा फल्लियों पर होता हैं। रोगग्रस्त पत्तियां जगह-जगह पीली हो जाती हैं। पत्तियों की निचली सतह पर अनियमित आकार के भूरे धब्बे दिखाई देते हैं जिनमें लालिमा भी

शेष पृष्ठ 8 पर

कृषि एवं कृषि संबंधित विषयों पर आधुनिक जानकारी लेने हेतु पढ़ें
खेती संदेश
हिन्दी साप्ताहिक समाचार पत्र
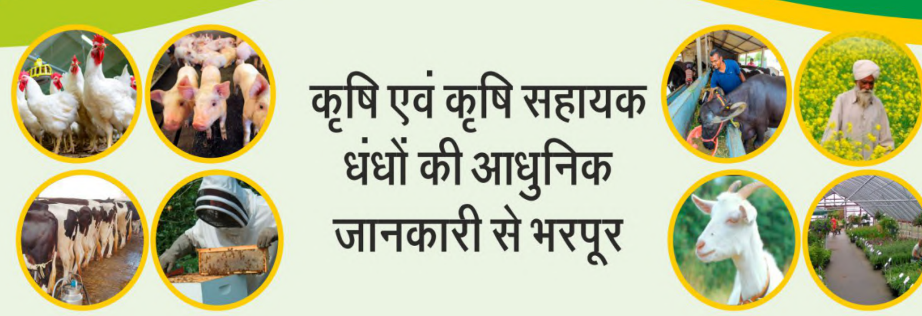
कृषि एवं कृषि सहायक धंधों की आधुनिक जानकारी से भरपूर
एक वर्ष में 52 अंक
किसान भाईयों व डीलर/डिस्ट्रीब्यूटरों के लिए
चंदों में विशेष छूट
एक वर्ष 500/- रुपए
दो वर्ष 800/- रुपए
पेमेंट करने के पश्चात् अपना डाक पता इस नंबर पर भेजें :
90410-14575
KHETI DUNIYAN
TID - 62763351
चंदे भेजने हेतु QR कोड सकैन करें।
खेती संदेश (कृषि साप्ताहिक)
के.डी. कॉम्पलैक्स, गऊशाला रोड, पटियाला

खेती संदेश

KHETI SANDESH

मुख्य कार्यालय :
9–ए, अजीत नगर,
पटियाला–147001
(पंजाब)
मो. 98151–04575

कार्पोरेट कार्यालय :
के.डी. कॉम्पलैक्स, गऊशाला रोड,
नजदीक शेरे पंजाब मार्केट,
पटियाला–147001
(पंजाब)
मो. 90410–14575

वर्ष : 02 अंक : 28
तिथि : 13-07-2026

सम्पादक
परमिंदर कौर

सम्पादकीय बोर्ड

डॉ. डी.डी. नारंग
डॉ. जे.एस. डाल
डॉ. आर.एम. फुलझेले

Editor : PARMINDER KAUR
Printer, Publisher and Owner of Weekly 'KHETI SANDESH' Printed at Drishti Printers, Dasmesh Market, Near Sher-e-Punjab Market, Gaushala Road, Patiala-147001 (Pb.) and published from Kheti Sandesh, House No. 9-A, Ajit Nagar, Patiala-147001 (Pb.). E-mail : khetisandesh2025@gmail.com Mob. 90410-14575, RNI No.PBBIL/25/A0210

पपीते को बचाएं – रोगों से

पपीते की व्यवसायिक बागवानी भारतवर्ष में विशेष रूप से बिहार, असम, उत्तर प्रदेश, गुजरात, मध्य प्रदेश व दक्षिण भारत में की जा रही है। हरियाणा, पंजाब व अन्य प्रांतों में भी किसान इसकी खेती घरेलू बगीचों व बागवानी में सफलतापूर्वक कर रहे हैं। पपीते का पौधा एक से डेढ़ वर्ष में फल देना शुरू कर देता है और इसके फल पूरा वर्ष उपलब्ध रहते हैं। पपीते के फल औषधीय व पौष्टिक गुणों का भण्डार हैं तथा इससे अनेक स्वादिष्ट व गुणकारी उत्पाद बना कर अच्छा पैसा कमाया जा सकता है। पपीते की सबसे बड़ी खासियत यह है कि इसकी खेती आम, अमरूद, नींबू, बेर व अन्य फलदार पौधों में जो जगह बीच में खाली पड़ी रहती है, वहां पर सफलतापूर्वक की जा सकती है, जिससे प्रति एकड़ मुनाफा और बढ़ जाता है। परन्तु इस फसल को कई प्रकार के रोग नुकसान पहुंचाते हैं, जिनकी जानकारी होना किसान के लिए अत्यंत आवश्यक है। प्रस्तुत लेख में पपीते के मुख्य रोग व इनकी रोकथाम के बारे में विस्तार से जानकारी दी गई है।

1. आर्द्रगलन (डेम्पिंग ऑफ) : यह एक फफूंद का व्यापक रोग है, जो मुख्यतया पपीते की पनीरी में पाया जाता है, जिससे पौधे अंकुरण से पहले या बाद में मर जाते हैं। रोग के लक्षण रोग के तने पर ज़मीन से थोड़ा ऊपर दिखाई देते हैं। तना पानीनुमा बन जाता है व सिकुड़ जाता है तथा बाद में पूरा पौधा धराशायी हो जाता है। मृदाजनित होने के कारण बहुत से फफूंद मिट्टी में विद्यमान होते हैं तथा जब भी इनको अनुकूल तापमान व नमी उपलब्ध होती है, वह इस रोग का कारण बनते हैं।

रोकथाम :

* रोग रोधी किस्मों का चयन करें।
* पनीरी हमेशा उठी हुई क्यारियों में तैयार करें, जिनमें पानी की निकासी का समुचित प्रबंध हो।
* बुवाई से पहले बीजों को बाविस्टिन या कैप्टान फफूंदनाशक 2:5 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज के हिसाब से सूखा उपचार अवश्य करें।
* समय-समय पर कैप्टान या बाविस्टिन दवा का 0.2 प्रतिशत घोल का छिड़काव पौधशाला में करते रहें।

2. कॉलर गलन व तना गलन (फुटरॉट ऑफ पपाया) : पपीते की फसल का यह एक खतरनाक रोग है। इस रोग का प्रकोप वर्षा ऋतु में अधिक होता है। इस रोग के विशिष्ट लक्षण तने की छाल पर जलसिक्त स्पंजी धब्बे पौधे के कॉलर भाग में बनने लगते हैं। तने का कॉलर भाग मृदा लाइन के ठीक ऊपर होता है। इस प्रकार के बने धब्बे बहुत शीघ्रता से वृद्धि करते हैं, जिससे तने का निचला हिस्सा व जड़ें गलने लगती हैं तथा पूरा हिस्सा काला पड़ जाता है। रोग ग्रसित पौधों की पत्तियां पीली पड़ जाती हैं व पौधों की बढ़वार रुक जाती है। फलों का आकार भी छोटा रह जाता है। रोग की उग्रता होने से कई बार पूरा पौधा सूख जाता है तथा हवा के हल्के झोंके से टूट भी जाता है।

रोकथाम :

* पपीते उन्हीं खेतों में लगाएं, जहां पानी की निकासी का समुचित प्रबंध हो।
* रोग ग्रसित पौधों को शुरू में ही निकाल कर नष्ट कर दें।
* पपीते के इस रोग से बचने के लिए सिंचाई की रिंग विधि अपनाएं ताकि पौधे के तने को पानी ना लगे।
* पपीते की रोपाई करने के बाद (10–15 दिन के अंतराल पर) कैप्टान या बाविस्टिन या कॉपर ऑक्सीक्लोराईड का 0.2 प्रतिशत घोल बना कर मोटे फुव्वारे से छिड़काव करते रहें।
* पपीते की फसल में हमेशा इस बात की सतर्कता बरतें कि पेड़ के निचले हिस्से में कोई चोट या घाव नहीं होना चाहिए।

3. काले धब्बों का रोग (एन्थ्रैक्नोज़) : यह रोग पपीते की फसल व भंडारण में रखे हुए पपीतों को भी नुकसान पहुंचाता है। रोग के प्रकोप से फल किसी भी अवस्था में प्रभावित हो सकते हैं। फलों पर यह जलसिक्त धब्बे अन्दर की तरफ धंसे हुए दिखाई पड़ते है। बाद में इन फलों के ऊपर कवक के गुलाबी रंग के बिन्दू भी साफ दिखाई पड़ते हैं, जबकि इन धब्बों के नीचे गुद्दा नरम व पानीनुमा बन जाता है, जो पूरे फल को गला देता है। पौधों की पत्तियों पर छोटे-छोटे अनियमित आकार के जलसिक्त धब्बे बन जाते हैं, जो आपस में मिल कर पूरी पत्ती पर फैल जाते हैं तथा रोग ग्रसित पौधों के पत्ते किनारों से सड़ने लगते हैं। अधिक नमी व तापमान फसल में रोग को बढ़ावा देते हैं।

रोकथाम : * रोग ग्रसित फलों को शुरू में ही नष्ट कर दें।

* पौधों पर कैप्टान या इंडोथेन एम-45 (मैन्कोज़ेब) का 0.2 प्रतिशत घोल का छिड़काव 15 दिन के अंतराल पर अवश्य करें।

4. सफेद चूर्णी रोग : इस रोग के लक्षण पौधे की पत्तियों व फलों पर दिखाई देते हैं। शुरू में छोटे-छोटे गहरे रंग के धब्बे बनते हैं, जोकि बाद में सफेदनुमा बन जाते हैं। बाद में इन धब्बों का आकार बढ़ जाता है, जो पूरी पत्ती पर छा जाते हैं। रोग ग्रसित पत्तियां हरिमाहीन व टेढ़ी-मेढ़ी होकर गिर जाती हैं। रोग ग्रसित फल आकार में छोटे व विकृत हो जाते हैं। यह रोग अधिक आर्द्रता (80–85 प्रतिशत) व 22–26 डिग्री सैंटीग्रेड पर फैलता है।

रोकथाम : रोग के लक्षण दिखाई देते ही फसल में प्रोपीकोनाज़ोल या सल्फैक्स का 0.25 प्रतिशत का घोल बना कर छिड़काव करें तथा 10–15 दिन में दूसरा छिड़काव दोहरायें।

5. विषाणु रोग :

1. मौज़ेक : इस रोग का प्रकोप वैसे तो सभी उम्र के पौधों पर देखा जा सकता है, परन्तु अधिक प्रकोप छोटी उम्र के पौधों पर ही होता है। शुरू में विषाणु रोग नई पत्तियों को प्रभावित करता है, जिससे उनका आकार छोटा रह जाता है। पत्तियों पर मोज़ैक के लक्षण दिखाई देते हैं, जो पत्ती के सम्पूर्ण पीले-हरे पटल पर फफोलेनुमा हरे ऊतकों पर बिखरे रहते हैं। माहू कीट द्वारा यह रोग एक पौधे से दूसरे पौधे में फैलता है। रोग ग्रसित पौधे बौने रह जाते हैं, जिन पर फल लम्बे व छोटे रहते हैं। अधिक तापमान पर (52 डिग्री सैंटीग्रेड) विषाणु की सक्रियता घट जाती है।

2. पपीते का पत्ती मोड़न विषाणु रोग : इस रोग से पौधे की पत्तियां छोटी व झुर्रीदार हो जाती हैं। पत्तियों में सबसे मुख्य लक्षण उनका अंदर की ओर मुड़ कर कप जैसी संरचना बना कर नीचे की ओर झुकना एवं इनकी शिराओं का पीला पड़ जाना है। पत्तियां मोटी हो जाती हैं। बाद में यह पत्तियां सूख कर गिर जाती हैं। फल बहुत कम व छोटे लगते हैं। रोग ग्रसित पौधों की वृद्धि रुक जाती है।

रोकथाम : * विषाणु रोग से ग्रसित पौधों को खेत से तुरन्त निकाल देना चाहिए ताकि स्वस्थ पौधों में यह रोग ना फैल सके।

* कपास व भिंडी की फसल के नज़दीक पपीते की काश्त नहीं करनी चाहिए।

रोग के आक्रमण से पूर्व सफेद मक्खी एवं माहू की रोकथाम के लिए मैलाथियॉन 50 ई.सी. (0.1 प्रतिशत) 100 मिलीलीटर दवा का 100 लीटर पानी में मिला कर छिड़काव करना चाहिए।

कन्द उत्पादन द्वारा

खरीफ प्याज़ की सफल खेती

आमतौर पर प्याज़ की खेती रबी मौसम में की जाती है। महाराष्ट्र, गुजरात, आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, तमिलनाडु राज्यों में इसका उत्पादन रबी व खरीफ दोनों मौसमों में लिया जाता है। जबकि हरियाणा, पंजाब, यू.पी. व राजस्थान में केवल प्याज़ को रबी मौसम में ही उगाया जा सकता है, क्योंकि गर्मी के मौसम में प्याज़ की नरसरी तैयार करना एक कठिन कार्य है। परन्तु कंद व गंठियां के द्वारा इसकी खेती इन राज्यों में खरीफ के मौसम में भी बिना किसी नुकसान के सफलतापूर्वक की जा सकती है। इस लेख में कंद व गंठियों द्वारा पौध तैयार करने की पूरी विधि व इसकी समग्र सिफारिशों की जानकारी दी जा रही है।

जलवायु : खरीफ व रबी मौसम में उगाई जाने वाली किस्मों की प्रकाश की समयावधि अलग-अलग पाई जाती है, रबी प्याज़ के लिए अधिक प्रकाश विधि की जरूरत है। जबकि खरीफ प्याज़ में कम प्रकाश अवधि की जरूरत पड़ती है। इसलिए प्याज़ की किस्मों का चुनाव इसी हिसाब से करें।

भूमि का चयन : प्याज़ के लिए मिट्टी में जीवांश पर्याप्त मात्रा में तथा पानी की निकासी पूरी तरह हो। इसकी जल्दी पैदावार लेने के लिए रेतीली तथा रेतीली दो मठ लेकिन अधिक पैदावार के लिए भारी मिट्टी की जरूरत है। पी.एच. मान 5.8 से 6.8 की आवश्यकता है।

किस्में :

एन-53 : इसके प्याज़ गहरे लाल रंग, गोल आकार के व कम तीखे होते हैं। यह किस्म 140 से 145 दिन में पक कर तैयार हो जाती है और औसत पैदावार लगभग 90 से 100 क्विंटल प्रति एकड़ है। इसकी भण्डारण क्षमता कम है।

एग्रीफाउंड डार्क रेड : इसके कन्द गहरे लाल रंग के व गोलाकार होते हैं। यह किस्म 140 से 150 दिन में पक कर तैयार होती है। इसमें तीखापन एन-53 से अधिक होता है। इसकी औसत पैदावार 110 से 120 क्विंटल प्रति एकड़ है।

इसके अतिरिक्त बसंत-780, फूले समार्थ व उदयपुर-102 किस्में की भी खेती खरीफ मौसम में की जा सकती है।

रबी मौसम में नर्सरी उत्पादन : रबी मौसम में बीज को पौधशाला में अक्तूबर से मध्य नवम्बर तक बुवाई की जा सकती है। एक एकड़ की नर्सरी तैयार करने के लिए 4 से 5 किलोग्राम बीज की जरुरत पड़ती है।

खरीफ प्याज की पौध तैयार करने की विधि : खरीफ प्याज़ की पौध को मध्य मई से मध्य जून के महीने में तैयार करते हैं तथा इसकी रोपाई आमतौर पर मध्य अगस्त तक की जा सकती है। एक एकड़ की नर्सरी तैयार करने के लिए 5 से 6 किलोग्राम बीज की जरुरत पड़ती है। नर्सरी उत्पादन हेतु निम्नलिखित बातों को ध्यान रखें :

1. पौधशाला सिंचाई स्त्रोत के समीप होनी चाहिए।
2. नर्सरी की क्यारियां ऊंची उठी हुई होनी चाहिए।
3. पौधशाला छायादार वृक्ष या ऊंचे स्थान पर होने चाहिए। जहां पौध को अधिक धूप, गर्म हवा, अधिक बरसात से बचाने के लिए छप्पर या पॉलीथीन के जाल से ढकना चाहिए।
4. आर्द्रगलन रोग से बचाव के लिए बीज उपचार व पौध उपचार इसके लिए कैप्टान और थाइरम 2 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज दवा का प्रयोग करें।

कंद (गंठियों) द्वारा नर्सरी तैयार करने की विधि : एक एकड़ की रोपाई हेतु कंद द्वारा नर्सरी तैयार करने के लिए 5 किलो बीज की मात्रा को 200 वर्ग मीटर क्षेत्र में मार्च के महीने में बुवाई करें। जब अप्रैल के अन्तिम सप्ताह व मई के प्रथम सप्ताह में कन्दों का आकार 8 से 10 ग्राम का हो जाए, तो उन्हें खोद कर निकाल लें। पत्तियों को गर्दन के ऊपर 2 से 3 सैंटीमीटर छोड़ कर काट या तोड़ लेते है। रोग रहित गंठियों को छांट कर टोकरियों या पतले टांट के थैलों में भर कर कमरे में भण्डारण कर लेते हैं, जिनकी रोपाई खेत में मध्यम अगस्त के माह में 30 से 45 सैंटीमीटर की दूरी पर बनी डोलियों के दोनों किनारों पर 10 सैंटीमीटर के फासले पर करें। ध्यान रखें कि रोपाई के तुरन्त बाद सिंचाई करनी बहुत आवश्यक है।

खाद व उर्वरक : खेत में 10 से 12 टन गोबर या कम्पोस्ट की गली-सड़ी खाद प्रति एकड़ की दर से भूमि की तैयारी के समय डालें। जबकि प्याज़ के भरपूर उत्पादन के लिए 50 किलोग्राम नाइट्रोजन, 15 किलोग्राम फास्फोरस, 10 किलोग्राम पोटाश प्रति एकड़ प्रयोग करें। नाइट्रोजन की आधी मात्रा फास्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा पौध लगाते समय या गंठियों की रोपाई के समय डोलियां बनाने से पहले दें, जबकि शेष आधी बची नाइट्रोजन दो बार में एक-एक महीने के अंतराल पर डालें।

सिंचाई : अगस्त से अक्तूबर तक यदि वर्षा नहीं हो तो 8 से 10 दिन के अन्तराल पर नियमित सिंचाई करें। कंद की बढ़वार शुरू होने पर सिंचाई का अन्तराल कम कर दें।

फसल की खुदाई व कटाई : कंद नवम्बर के अन्तिम सप्ताह से लेकर दिसम्बर के मध्य तक खुदाई के लिए तैयार हो जाते हैं। खुदाई से 15 दिन पहले सिंचाई बंद कर दें। पत्तियों को पैरों से गिरा दें। खुदाई करने के बाद प्याज़ को इनकी कतारों में डाल कर एक सप्ताह तक खेत में ही रख कर सुखा लें। पत्तों को सूखने के बाद गर्दन से 3-5 सैंटीमीटर तोड़ कर अलग कर दें और 3 से 5 दिन तक कंदों को सुखायें।

उपज : खरीफ प्याज़ की उपज 80 से 100 क्विंटल प्रति एकड़ ली जा सकती है।

बीमारी :

बैंगनी धब्बा (परपल ब्लॉच) : इस रोग के कारण पौधे की पत्तियों व फूलों की डंडियों पर जामनी व गहरे भूरे रंग के धब्बे बनते है। रोग के प्रकोप की अवस्था में पौधों के डंठल मुड़ जाते है तथा जिससे प्याज़ के उत्पादन व बीज के उत्पादन में भी भारी नुकसान उठाना पड़ता है।

रोकथाम : इस रोग की रोकथाम हेतु मैन्कोज़ेब या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड का 2.5 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोल बना कर छिड़काव करना चाहिए।

थ्रिप्स (चुरड़ा) : यह कीड़ा प्याज़ की पत्तियों का रस चूसता है, जिसकी वजह से पत्तियों पर सफेद चांदी जैसी धारियां व भूरे रंग के धब्बे बन जाते हैं। यह कीड़े पीले व सफ़ेद रंग के होते हैं, जो मुख्य रूप से पत्तियों के आधार व उनके बीच में घूमते रहते हैं तथा उनका रस चूस कर चांदीनुमा बना देते हैं। इस कीड़े की रोकथाम हेतु 75 मिलीलीटर 20 ई.सी. फैनवेलरेट या 60 मिलीलीटर साइपरमैथरीन 25 ई.सी. या 300 मिलीलीटर मैलाथियान दवा को 150 से 200 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़काव करें।

ध्यान देने योग्य बातें :

1. प्याज़ की पत्तियां खड़ी व चिकनी होती है, जिन पर प्राय: दवा नहीं ठहरती। इसलिए दवाओं के अच्छे परिणाम हेतु चिपकने वाले पदार्थ जैसे ट्राईटोन व सेंडोविट को दवाओं के घोल में मिला देना चाहिए।

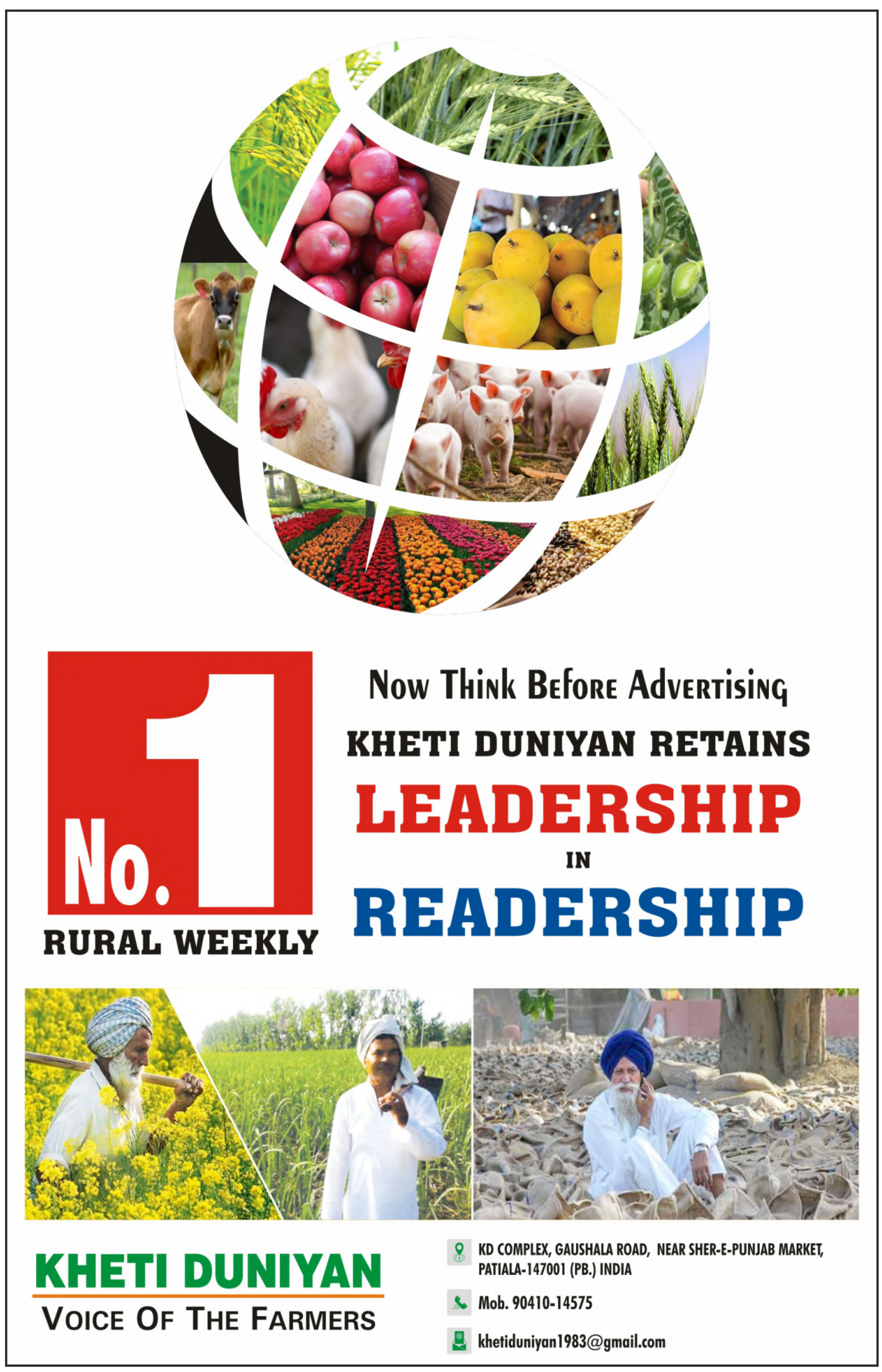

—— समुद्री जल शोधन ——

समुद्र से हो सकता है पेयजल मंथन

देश के अनेक शहरों और गांवों में भूजल स्तर लगातार नीचे जा रहा है। नदियां प्रदूषित हो रही हैं, वर्षा का स्वरूप अनिश्चित होता जा रहा है और जलवायु परिवर्तन ने स्थिति को और गंभीर बना दिया है। बढ़ती आबादी, तेजी से हो रहे शहरीकरण और औद्योगिक विकास के कारण पानी की मांग लगातार बढ़ रही है।

यदि भारत में उपलब्ध जल का वैज्ञानिक प्रबंधन किया जाए और समुद्री जल शोधन जैसी आधुनिक तकनीकों को साथ जोड़ा जाए, तो आने वाले दशकों में जल संकट की गंभीरता को काफी हद तक कम किया जा सकता है।

दीपक कुमार शर्मा

तीन ओर से समुद्र से घिरे भारत के सामने जल का असीमित भंडार मौजूद है। पृथ्वी पर उपलब्ध कुल जल का लगभग 97 प्रतिशत भाग समुद्रों में खारे पानी के रूप में है, जबकि केवल लगभग 2.5 प्रतिशत जल मीठा है। इसमें भी अधिकांश जल हिमनदों और बर्फ की चादरों में बंद है तथा मानव उपयोग के लिए सीधे उपलब्ध मीठा जल एक प्रतिशत से भी कम है। ऐसे में समुद्री जल को शुद्ध कर उपयोग योग्य बनाना भविष्य की आवश्यकता बनता जा रहा है।

आज आधुनिक विज्ञान की सहायता से समुद्री जल से नमक और अन्य अशुद्धियां हटाकर उसे पेयजल में परिवर्तित किया जा सकता है। इसे समुद्री जल शोधन कहा जाता है। विश्व के अनेक देशों ने इसे अपनी जल सुरक्षा की आधारशिला बना लिया है। भारत के लिए भी अब इस दिशा में गंभीरता से आगे बढ़ने का समय आ गया है।

सऊदी अरब, संयुक्त अरब अमीरात, कतर, कुवैत, बहरीन और ओमान जैसे देशों में प्राकृतिक मीठे जल के स्रोत अत्यंत सीमित हैं। वहां वर्षा नगण्य होती है और अधिकांश भूभाग रेगिस्तान है। इसके बावजूद वहां नागरिकों को चौबीसों घंटे सुरक्षित पेयजल उपलब्ध कराया जाता है। इसका मुख्य कारण समुद्री जल शोधन संयंत्र हैं। भारत की स्थिति खाड़ी देशों से अलग अवश्य है, लेकिन चुनौतियां कम नहीं हैं। विश्व की लगभग 18 प्रतिशत आबादी भारत में रहती है, जबकि मीठे जल संसाधनों में उसकी हिस्सेदारी केवल लगभग 4 प्रतिशत है। देश में उपलब्ध मीठे जल का लगभग 80 प्रतिशत उपयोग कृषि क्षेत्र करता है। दूसरी ओर, उद्योगों और शहरों की बढ़ती आवश्यकताओं ने जल संकट को और गहरा कर दिया है।

सबसे बड़ी चिंता भूजल का लगातार दोहन है। हरियाणा, पंजाब, राजस्थान, दिल्ली, गुजरात और तमिलनाडु सहित अनेक राज्यों में भूजल स्तर तेजी से नीचे जा रहा है। कई क्षेत्रों में हर वर्ष लगभग एक मीटर तक जल स्तर गिरने की रिपोर्ट सामने आती रही है।

ऐसे समय में समुद्री जल शोधन भारत के लिए एक रणनीतिक विकल्प बन सकता है। देश के पास लगभग 7,516 किलोमीटर लंबी समुद्री तटरेखा है। गुजरात, महाराष्ट्र, गोवा, कर्नाटक, केरल, तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश, ओडिशा और पश्चिम बंगाल जैसे राज्यों में बड़े पैमाने पर समुद्री जल शोधन परियोजनाएं विकसित की जा सकती हैं। इससे तटीय शहरों की पेयजल आवश्यकताओं का बड़ा हिस्सा पूरा किया जा सकता है और भूजल पर निर्भरता कम होगी।

चेन्नई इसका सबसे अच्छा उदाहरण है। आज यह अपने पेयजल का एक महत्वपूर्ण हिस्सा समुद्री जल शोधन संयंत्रों से प्राप्त करता है। गुजरात के दहेज, जामनगर और अन्य औद्योगिक क्षेत्रों में भी इस तकनीक का उपयोग लगातार बढ़ रहा है।

हालांकि, यह भी सत्य है कि समुद्री जल शोधन कोई जादुई समाधान नहीं है। इसकी सबसे बड़ी चुनौती लागत है। संयंत्रों की स्थापना, संचालन और रखरखाव पर भारी निवेश की आवश्यकता होती है। इसके अलावा, बड़ी मात्रा में ऊर्जा की भी जरूरत पड़ती है। यदि ऊर्जा का स्रोत जीवाश्म ईंधन हो, तो लागत बढ़ने के साथ-साथ कार्बन उत्सर्जन भी बढ़ता है।

आज भारत विश्व के अग्रणी सौर ऊर्जा उत्पादक देशों में शामिल है। राजस्थान, गुजरात, तमिलनाडु और आंध्र प्रदेश जैसे राज्यों में विशाल सौर एवं पवन ऊर्जा क्षमता उपलब्ध है। यदि समुद्री जल शोधन संयंत्रों को नवीकरणीय ऊर्जा से जोड़ा जाए, तो उनकी परिचालन लागत और कार्बन उत्सर्जन दोनों में उल्लेखनीय कमी लाई जा सकती है। एक अन्य चुनौती पर्यावरण संरक्षण की है। समुद्री जल से नमक अलग करने के बाद अत्यधिक खारा अवशेष बचता है। यदि इसे वैज्ञानिक उपचार के बिना समुद्र में छोड़ दिया जाए, तो समुद्री जैव विविधता और पारिस्थितिकी तंत्र प्रभावित हो सकते हैं। इसलिए प्रत्येक नई परियोजना के साथ कठोर पर्यावरणीय मानकों का पालन और आधुनिक अपशिष्ट प्रबंधन व्यवस्था अनिवार्य होनी चाहिए।

भारत को इस क्षेत्र में चरणबद्ध रणनीति अपनानी चाहिए। पहले चरण में प्रमुख तटीय शहरों में बड़े समुद्री जल शोधन संयंत्र स्थापित किए जाएं। दूसरे चरण में तटीय औद्योगिक क्षेत्रों को समुद्री जल आधारित जलापूर्ति से जोड़ा जाए, ताकि उद्योगों द्वारा मीठे जल का उपयोग कम हो। तीसरे चरण में पाइपलाइन नेटवर्क विकसित कर निकटवर्ती आंतरिक क्षेत्रों तक भी शुद्ध जल पहुंचाने की व्यवस्था बनाई जा सकती है।

लेकिन केवल समुद्री जल शोधन से भारत की सभी जल समस्याओं का समाधान संभव नहीं होगा। वर्षा जल संचयन, भूजल पुनर्भरण, तालाबों और झीलों का संरक्षण, नदियों की स्वच्छता तथा उपचारित अपशिष्ट जल के पुन: उपयोग को समान प्राथमिकता देनी होगी।

दरअसल, भारत के सामने सबसे बड़ी चुनौती पानी की कमी नहीं, बल्कि जल प्रबंधन की है। हर वर्ष अरबों घन मीटर वर्षा जल बिना उपयोग के समुद्र में चला जाता है। अनेक शहरों में उपचारित जल का पुन: उपयोग नगण्य है। यदि भारत में उपलब्ध जल का वैज्ञानिक प्रबंधन किया जाए और समुद्री जल शोधन जैसी आधुनिक तकनीकों को साथ जोड़ा जाए, तो आने वाले दशकों में जल संकट की गंभीरता को काफी हद तक कम किया जा सकता है।

वायु प्रदूषण के कारण पृथ्वी से खत्म हो जाएंगे कीट पतंगे

अध्ययन के मुताबिक 1990 के बाद से कीट-पतंगों की आबादी में करीब 25 फीसदी की कमी आई है, अनुमान है कि यह कीट हर दशक में करीब 9 फीसदी की दर से कम हो रहे हैं।

शोधकर्ताओं के अनुसार प्रदूषण कीटों के एंटीना को प्रभावित करता है और मस्तिष्क को भेजे जाने वाले गंध संबंधी विद्युत संकेतों की शक्ति को कम कर देता है। कीटों की एंटीना में गंध को पकड़ने वाले रिसैप्टर्स होते हैं, जो आहार, स्त्रोत, संभावित साथी और अंडे देने के लिए एक अच्छी जगह खोजने में मदद करते हैं।

ऐसे में यदि किसी कीट के एंटीना पर्टिकुलेट मैटर से ढके होते हैं, तो उससे एक भौतिक अवरोध उत्पन्न हो जाता है। यह गंध को पकड़ने वाले रिसैप्टर्स और हवा में मौजूद गंध के अणुओं के बीच होने वाले सम्पर्क को रोकता है।

एंटीना पर प्रदूषक तत्वों के जमने के कारण कीटों का सूचनातंत्र काम करना बंद कर देता है। आपस में संदेशों का आदान-प्रदान नहीं कर पाते। भोजन, अपने साथी को खोजना या अपने ठिकानों को तैलाश करने की उनकी शक्ति क्षीण हो जाती है। उनके एंटीना काम करना बंद कर देते है और कीट एक जिंदा लाश बन जाता है, जो समय से पहले मर जाता है। कीटों की सिग्नलिंग प्रणाली डिस्टर्ब हो जाती है।

वायु प्रदूषण केवल इंसान को प्रभावित कर रहा है, ऐसा नहीं है। ज़हरीली गैसों का बुरा असर पूरी जैव विविधता के खात्मे पर तुला है। इस कड़ी में वो सूक्ष्म कीट भी शामिल हैं, जो हमें अक्सर हवा में उड़ते दिखते हैं। ये सूक्ष्म कीट कचरे का विघटन, मानव जीवन, फसलीय चक्रीकरण के लिए बेहद जरूरी है। इनकी अहमियत मानव जीवन में प्रत्यक्ष तौर पर नज़र नहीं आती। लेकिन अप्रत्यक्ष रूप से ये कीट इंसान को हर स्तर पर प्रभावित करते हैं।

लेकिन वायुमंडल में चढ़ती प्रदूषण की मोटी परत ने इन कीटों की जिंदगी डिस्टर्ब कर दी है। कीटों के भोजन तलाशने से लेकर साथी से मिलन, संतति निर्माण और विकास की प्रक्रिया प्रदूषण के कारण नष्ट हो चुकी है। कीटों के सूचनातंत्र को धुएं और गैसों ने डिस्टर्ब कर उन्हें रास्ते से भटका दिया है।

हालिया शोधों के मुताबिक कीटों की घटती आबादी के लिए प्रदूषण के साथ शहरीकरण, कृषि क्षेत्र में बढ़ता कीटनाशकों का उपयोग और जलवायु परिवर्तन जैसी वजह जिम्मेदार हैं।

प्रदूषण न केवल शहरों के आस-पास बल्कि दूर-दराज ग्रामीण क्षेत्रों में भी इनकी आबादी को प्रभावित कर रहा है। शोध से पता चला कि प्रदूषण के चलते आने वाले कुछ दशकों में दुनिया के 40 फीसदी कीट खत्म हो जाएंगे। धुआं, धूल, धुंध, पी.एम. के कण कीटों के एंटीना और रिसैप्टर्स पर बहुत बुरा असर डाल रहे हैं। यूनिवर्सिटी ऑफ मेलबोर्न, बीजिंग वानिकी विश्वविद्यालय और कैलिफोर्निया के शोधकर्ताओं के अध्ययन में कीटों पर प्रदूषण का असर अनुमान से कहीं ज्यादा निकला है। वहीं विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यू.एच.ओ.) द्वारा तय मानक के अनुसार वार्षिक औसत से ज्यादा है।

खेतों, बगीचों में उड़ते कीटों का मुख्य काम परागण होता है। ये फसलों, फूलों को परागित कर नए बीजों का संवर्धन करते हैं। इंटरनैशनल यूनियन फॉर कंजर्वेशन ऑफ नेचर (आई.यू.सी.एन.) द्वारा संकट ग्रसित प्रजातियों के लिए जारी की जाने वाली रैड लिस्ट में कीटों की सिर्फ 8 फीसदी प्रजातियां ही शामिल हैं।

एक अन्य अध्ययन के मुताबिक 1990 के बाद से कीटों की आबादी में करीब 25 फीसदी की कमी आई है, अनुमान है कि यह कीट हर दशक में करीब 9 फीसदी की दर से कम हो रहे हैं।

नाइट्रेस ऑक्साइड या ओजोन जैसे गैसी वायु प्रदूषकों की तुलना में कणीय पदार्थों का सम्पर्क कीटों और पारिस्थितिकी तंत्र के लिए अधिक खतरनाक हो सकता है।

इंसान को यह समझना होगा कि ये उन्हें कीट, तितलियां, फ्लाइज हमारे पारिस्थितिकी तंत्र में कीटों और बीमारियों के नियमन, परागण और पोषक चक्रण के माध्यम से महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, जिनमें से सभी के लिए रासायनिक संकेतों का प्रभावी पता लगाना आवश्यक है।

– सीमा अग्रवाल

वर्षाकालीन मूंग की उन्नत कृषि क्रियाएं

भारत का विश्व में दलहन उत्पादन में विशेष स्थान है, तो भी अपनी शाकाहारी जनसंख्या की दालों की मांग पूरी नहीं कर पाता है। दालों की बढ़ती मांग व आयात खर्च को देखते हुए दलहनी फसलों की खेती को महत्व तथा उत्पादकता बढ़ाने की आवश्यकता है। चना, मटर, मसुर रबी मौसम की तथा अरहर, उड़द,

मूंग खरीफ मौसम की प्रमुख दलहनी फसल है। मूंग की खेती ग्रीष्म व खरीफ दोनों मौसम में होती है। प्रदेश में धान गेहूं के क्षेत्रों में अधिकांशतया ग्रीष्मकालीन मूंग की खेती होती है, जबकि दक्षिण-पश्चिम क्षेत्रों में अधिकांशतया वर्षाकालीन मूंग की खेती होती है। कम समय में पकने व भूमि की उपजाऊ शक्ति बढ़ाने में सहायक होने के कारण मूंग की खेती की संसाधन संरक्षण में भूमिका होगी। वर्षाकालीन मूंग की अधिक पैदावार के लिए किसानों को निम्नलिखित उन्नत कृषि क्रियाएं अपनानी चाहिए :

उन्नत किस्में : चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय द्वारा विकसित वर्षाकालीन मूंग की किस्में 60-70 दिन में पक जाती हैं तथा अच्छी पैदावार देने में सक्षम हैं। प्रमुख उन्नत किस्मों का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है :

मुस्कान (एम.एच. 96-1) : इस किस्म का दाना आकार में मध्यम, चमकीला व हरे रंग का होता है। यह पीला पत्ता मोज़ेक वायरस रोग की अवरोधी किस्म है। इसकी फलियां एक साथ पकती हैं तथा औसत पैदावार 5-6 क्विंटल प्रति एकड़ है।

सत्या : यह किस्म मूंग की अन्य किस्मों की तुलना में अधिक बढ़ती है। इसकी फलियां सीधी व दाने चमकदार हरे रंग के होते हैं। यह किस्म मूंग की मुख्य बीमारियों की अवरोधी है। यह लगभग 70 दिनों में पक जाती है तथा औसत पैदावार 6.5-7.0 क्विंटल प्रति एकड़ है।

एम.एच.-421 : इस किस्म का दाना आकर्षक, चमकीला, हरा तथा मध्यम आकार का होता है। इसकी फलियां झड़ती नहीं हैं। यह किस्म मूंग की प्रमुख बीमारियों की अवरोधी है। इसकी औसत पैदावार 5.6-6.4 क्विंटल प्रति एकड़ है।

एम.एच.-318 : यह किस्म 60 दिन में पक जाती है। यह पीला पत्ता मोज़ेक वायरस रोग की अवरोधी किस्म है। इसके दाने आकर्षक, चमकीले हरे तथा मध्यम आकार के होते हैं, इसकी औसत पैदावार 5.5-6.4 क्विंटल प्रति एकड़ है।

बुवाई का समय : जुलाई के पहले सप्ताह में मौनसून की वर्षा होने पर मूंग की बुवाई का उपयुक्त समय रहता है।

जीवाणु खादों से बीज का उपचार : मूंग की पैदावार बढ़ाने के लिए बीज का राइजोटीका व फास्फोटीका से उपचार करना चाहिए। ये टीके विश्वविद्यालय के माइक्रोबॉयलॉजी विभाग और किसान सेवा केन्द्र से प्राप्त किए जा सकते हैं। एक एकड़ के लिए 50-50 मिलीलीटर राइजोटीका तथा फास्फोटीका की आवश्यकता होती है। टीकों के प्रयोग के लिए एक कप पानी में 50 ग्राम गुड़ घोल कर बीज पर मिलाएं तथा इसके पश्चात् टीकों का घोल बीज पर लगाएं। बीजों को हाथ से अच्छी तरह मिला लें तथा बुवाई से पहले छाया में सुखा लें।

बीज की मात्रा व बुवाई का तरीका : वर्षाकालीन मूंग की एक एकड़ में बुवाई के लिए 6 किलोग्राम बीज की आवश्यकता होती है। बुवाई कतारों में करें। कतारों का फासला 30-45 सैंटीमीटर (1-1.5 फुट) तथा पौधों में 10 सैंटीमीटर रखें।

खाद : जीवाणु खादों से बीज उपचार के साथ-साथ बुवाई के समय 8 किलोग्राम नाईट्रोजन (17.5 किलोग्राम यूरिया) व 16 किलोग्राम फास्फोरस (35

किलोग्राम डी.ए.पी.) प्रति एकड़ के हिसाब से डालें।

निराई-गुड़ाई : वर्षाकालीन मूंग की फसल में वैशाखी मूंग की तुलना में अधिक खरपतवार उगते हैं। खरपतवारों की रोकथाम के लिए दो बार निराई-गुड़ाई करनी चाहिए। पहली निराई 20-25 दिन बाद तथा दूसरी 30-35 दिन बाद करनी चाहिए।

सिंचाई : वर्षाकालीन मूंग में आमतौर पर सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती, परन्तु लम्बे समय तक वर्षा ना होने की स्थिति में फसल की सिंचाई करें।

हानिकारक कीटों की रोकथाम : मूंग की फसल में बालों वाली सुंडी, पत्ती छेदक, हरा तेला और सफेद मक्खी हानि पहुंचाते हैं। बालों वाली सुंडी तथा पत्ता छेदक के नियंत्रण के लिए 250 मिलीलीटर मोनोक्रोटोफॉस 36 एस.एल. को 250 लीटर पानी में मिला कर प्रति एकड़ छिड़कें। हरा तेला और सफेद मक्खी की रोकथाम के लिए 400 मिलीलीटर मैलाथियान 50 ई.सी. या 250 मि.ली. डाईमिथोएट (रोगोर 30 ई.सी.) को 250 लीटर पानी में मिला कर 2-3 सप्ताह के अंतर पर प्रति एकड़ पर छिड़काव करें।

बीमारियां व रोकथाम : पत्तों के धब्बों का रोग, पत्तों का जीवाणु रोग, जड़ गलन रोग तथा पीला मोज़ेक मूंग फसल की प्रमुख बीमारियां हैं। पत्तों के धब्बों व जीवाणु रोग की रोकथाम के लिए कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 600-800 ग्राम मात्रा को 200 लीटर पानी में घोल कर प्रति एकड़ छिड़काव करें। जड़ गलन की रोकथाम के लिए बुवाई से पहले बीज का 4 ग्राम थाइरम प्रति किलोग्राम बीज की दर से सूखा बीज उपचार करें। पीला मोज़ेक की रोकथाम के लिए रोगरोधी किस्में उगाएं। सफेद मक्खी इस रोग को फैलाती है। इसकी रोकथाम के लिए 400 मिलीलीटर मैलाथियान 50 ई.सी. या 250 मिलीलीटर डाईमेथोएट (रोगोर 30 ई.सी.) का 250 लीटर पानी में मिला कर 2-3 सप्ताह के अन्तर पर प्रति एकड़ छिड़काव करें। रोगी पौधों को उखाड़ कर नष्ट करें।

मक्की की फसल में खरपतवार नियंत्रण

मक्की हरियाणा राज्य में खरीफ व बसंत ऋतु में बोई जाने वाली पंचकूला, अम्बाला, यमुनानगर, कुरुक्षेत्र व करनाल ज़िलों की प्रमुख फसल है। खरीफ की फसल बसंत ऋतु की फसल की अपेक्षा औसत पैदावार काफी कम है, जिसका मुख्य कारण बरसात बार-बार आने पर खरपतवारों का उचित नियंत्रण ना हो पाना है। खरपतवारों का उचित प्रबंध ना करने पर मक्की के उत्पादन में 50-60 प्रतिशत तक की कमी पाई जाती है।

मक्की की फसल में प्रारम्भ में बढ़वार मन्द गति से होती है। अत: खेत में पर्याप्त संख्या में खरपतवार उग कर फसल को भारी नुकसान पहुंचाते हैं। मक्की के खेत में भूमि की किस्म, जलवायु तथा मौसम के अनुसार अलग-अलग खरपतवारों की किस्में पाई जाती हैं। जैसे कि डीला, दूब, सवांक, पानपत्ता, बेल, बरू, मकड़ा, तकड़ी, घास, पैरा घास व हुलहुल इत्यादि। अत: इन खरपतवारों की वृद्धि को प्रारंभिक जीवन काल में नष्ट करके खेत को खरपतवार विहीन रखना आवश्यक है। प्रयोगों के आधार पर पाया गया है कि फसल की बुवाई के 45 दिन तक खेत को खरपतवारों से मुक्त रखने में सम्पूर्ण जीवन काल तक खरपतारों को नष्ट करने के समान उपज प्राप्त होती है। मक्की के खेत में उगे खरपतवारों को नष्ट करने के लिए यांत्रिक तथा रासायनिक दोनों ही विधियों का प्रयोग किया जाता है। प्रारम्भ में यह धारणा थी कि मक्की के खेत गुड़ाई करके खरपतवारों के नष्ट हो जाने के साथ ही भूमि खुल जाती है, जिससे मृदा में वायु संचार के बढ़ जाने से अधिक उपज प्राप्त होती है।

शाकनाशी पदार्थों के उपलब्ध ना होने पर मक्की की फसल में 2-3 बार निराई-गुड़ाई करनी आवश्यक होती है। इसमें प्रथम निराई बोने के 15 दिन बाद एवं दूसरी 30-35 दिन बाद एवं दूसरी 30-35 दिन बाद की जानी चाहिए। पौधों में दूसरी निराई के समय अतिरिक्त तथा कमज़ोर पौधों की छँटनी भी की जाती है। फसल के घुटनों तक बढ़ जाने पर निराई-गुड़ाई नहीं करनी चाहिए। निराई खुरपी, 'हैंड हो' तथा बैलों या ट्रैक्टर चालित हो या कल्टीवेटर से की जाती है। ध्यान रखना चाहिए कि गुड़ाई 4-5 सैंटीमीटर से अधिक गहरी ना की जाए। गुड़ाई सावधानीपूर्वक इस प्रकार की जानी चाहिए कि जिससे पौधों तथा जड़ों को क्षति ना पहुंचने पाए। परन्तु बार-बार बरसात होने की वजह व निराई-गुड़ाई के समय पर उपलब्ध ना होने की वजह से रासायनिक खरपतवारनाशी की ज़रूरत पड़ती है। इस दिशा में 400 से 600 ग्राम एट्राजीन (50 प्रतिशत घुलनशील पाऊडर) प्रति एकड़ 200 से 250 लीटर पानी में नमी रहने पर इस रसायन की प्रभावकारी शक्ति बढ़ जाती है। परन्तु एट्राजीन केवल सवांक, मकड़ा व कुछ चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों का ही नियंत्रण करती है। अगर खेत में संकरी चौड़ी पत्ती व डीला जाति के खरपतवार होते हैं। टैंबोट्रायोन (लोडिस 34.4 प्रतिशत घु.पा.) का 115 मिलीलीटर तैयार शुद्ध मिश्रण 400 मिलीलीटर चिपचिपे पदार्थ को 200 लीटर पानी की मात्रा बुवाई के 10 से 20 दिन बाद या खरपतवार की 2-3 पत्ती अवस्था पर प्रति एकड़ छिड़काव करें।

हरे चारे का भंडारण

पशुओं से अधिकतम दूध प्राप्त करने के लिए उन्हें पर्याप्त मात्रा में पौष्टिक चारे की आवश्यकता होती है। इन चारों को पशु-पालक या तो स्वयं उगाता है या फिर कहीं और से खरीद कर लाता है। चारे को अधिकांशत: हरी अवस्था में पशुओं को खिलाया जाता है तथा इसकी अतिरिक्त मात्रा को सुखा कर भविष्य में प्रयोग करने के लिए भंडारण कर लिया जाता है, ताकि चारे की कमी के समय उसका प्रयोग पशुओं को खिलाने के लिए किया जा सके। इस तरह से भंडारण करने से उसमें पोषक तत्व बहुत कम रह जाते हैं। इसी चारे का भंडारण यदि वैज्ञानिक तरीके से किया जाए, तो उसकी पौष्टिकता में कोई कमी नहीं आती तथा कुछ खास तरीकों से इस चारे को उपचार कर रखने से उसकी पौष्टिकता को काफी हद तक बढ़ाया भी जा सकता है।

चारों को भंडारण करने की विधियां

'हे' बनाना : 'हे' बनाने के लिए हरे चारे या घास को इतना सुखाया जाता है, जिससे कि उसमें नमी की मात्रा 15-20 प्रतिशत ही रह जाए। इससे पादप कोशिकाओं तथा जीवाणुओं की एन्जाइम क्रिया रुक जाती है, लेकिन इससे चारे की पौष्टिकता में कमी नहीं आती। 'हे' बनाने के लिए लोबिया, बरसीम, रिजका, फलीदार तथा ज्वार, नेपियर, जवी, बाजरा, ज्वार, मक्की, गिन्नी, अंजन आदि घासों का प्रयोग किया जाता है। लेग्यूम्स घासों में सुपाच्य तत्व अधिक होते हैं तथा इसमें प्रोटीन व विटामिन 'ए', 'डी' व 'ई' भी पर्याप्त मात्रा में पाए जाते हैं। दुग्ध उत्पादन के लिए ये फसलें बहुत उपयुक्त होती हैं। 'हे' बनाने के लिए चारा सुखाने हेतु इन तीन विधियों में से कोई भी विधि अपनाई जा सकती है।

चारे को गेर में सुखाना : इसमें चारे को काट कर 24 घंटों तक खेत में पड़ा रहने देते हैं, इसके बाद इसे छोटी-छोटी ढेरियों अथवा गेरों में बांध कर पूरे खेत में फैला देते हैं। इन गेरों को बीच-बीच में पलटते रहते हैं, जिससे की मात्रा घट कर लगभग 18 प्रतिशत तक हो जाए।

चारे को तिपाई विधि द्वारा सुखाना : जहां भूमि अधिक गीली रहती हो अथवा जहां वर्षा अधिक होती है, ऐसे स्थानों पर खेतों में तिपाइयां गाढ़ कर चारे की फसलों को उन पर फैला देते हैं। इस प्रकार वे भूमि के बिना संपर्क में आए, हवा व धूप से सूख जाती है। कई स्थानों पर घरों की छत पर भी घासों को सुखा कर 'हे' बनाया जाता है।

चारे का यूरिया द्वारा उपचार : सूखे चारे जैसे भूसा, तूड़ी, पुआल आदि में पौष्टिक तत्व लिग्निन के अंदर जकड़े रहते हैं, जोकि पशु के पाचन तंत्र द्वारा नहीं किए जा सकते। इन चारों को कुछ रासायनिक

पदार्थों द्वारा उपचार करके इनके पोषक तत्वों को लिग्निन से अलग कर लिया जाता है। इसके लिए यूरिया उपचार की विधि सबसे सस्ती तथा उत्तम है।

उपचार की विधि : एक क्विंटल सूखे चारे जैसे पुआल या तूड़ी के लिए चार किलोग्राम यूरिया को 50 लीटर साफ पानी में घोल बनाते हैं। चारे को समतल तथा कम ऊंचाई वाले स्थान पर 3-4 मीटर की गोलाई में 6 ऊंचाई की तह में फैला कर उस पर यूरिया के घोल का छिड़काव करते हैं। चारे को पैरों से अच्छी तरह दबा कर उस पर पुन: सूखे चारे की एक और पर्त बिछा दी जाती है और उस पर यूरिया के घोल का समान रूप से छिड़काव किया जाता है। इस प्रकार परत के ऊपर परत बिछा कर 25 क्विंटल की ढेरी बना कर उसे एक पॉलीथीन की शीट से अच्छी तरह ढक दिया जाता है। यदि पॉलीथीन की शीट उपलब्ध ना हो तो उपचारित चारे की ढेरी को गुम्बदनुमा बनाते हैं, जिसे ऊपर से पुआल के साथ मिट्टी का लेप लगा कर ढक दिया जाता है। उपचारित चारे को 3 सप्ताह तक ऐसे ही रखा जाता है, जिससे उसमें अमोनिया गैस बनती है, जो घटिया चारे को पौष्टिक तथा सुपाच्य बना देती है। इसके बाद इस चारे को पशु को खालिस या फिर हरे चारे के साथ मिला कर खिलाया जा सकता है।

यूरिया उपचार से लाभ : * उपचारित चारा नरम व स्वादिष्ट होने के कारण पशु उसे खूब चाव से खाते है तथा चारा बर्बाद नहीं होता।

* 5 या 6 किलो उपचारित पुआल खिलाने से दुधारू पशुओं में लगभग 1 किलोग्राम दूध की वृद्धि हो सकती है।

* यूरिया उपचारित चारे को पशु आहार में सम्मिलित करने से दाने में कमी की जा सकती है, जिससे दूध के उत्पादन की लागत कम हो सकती है।

* बछड़े-बछड़ियों को यूरिया उपचारित चारा खिलाने से उनका वज़न तेजी से बढ़ता है तथा वे स्वस्थ दिखाई देते हैं।

सावधानियां : * यूरिया का घोल साफ पानी में तथा सही मात्रा के साथ बनाना चाहिए।

* घोल में यूरिया पूरी तरह से घुल जाना चाहिए।

* उपचारित चारे को 3 सप्ताह से पहले पशु को कदापि नही खिलाना चाहिए।

* यूरिया के घोल का चारे के ऊपर समान रूप से छिड़काव करें।

शेष पृष्ठ 3 की

मूंगफली की प्रमुख बीमारियां एवं उनका समेकित प्रबंधन

पाई जाती है जो कुछ समय बाद गहरे रंग की हो जाती है। पौधों के प्रभावित तक विवर्णित होकर मर जाते है और फलस्वरूप विशेष विक्षत बन जाते हैं।

प्रबंधन : * ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई करें।

* प्रमाणित एवं स्वस्थ बीजों का चुनाव करें।

* रोगग्रस्त पौधों को निकालकर नष्ट कर दें।

* बीजों को बोर्डो मिश्रण (4:4:50) या कॉपर ऑक्सी-क्लोराइड या मेनकोजेब 2.5 से 3 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज बीजोपचार करें।

4. कॉलर रॉट

रोगकारक : एस्परजिलस नाइजर

लक्षण : इस बीमारी के लक्षण बीज के अंकुरण के समय से दिखाई देने लगते है तथा इस बीमारी का आक्रमण बुवाई से लेकर 50 दिन के अंतराल तक अत्यधिक होता है। यह बीमारी दो चरणों में दिखाई देती है, अंकुरण पूर्व और अंकुरण पश्चात की अवस्था। अंकुरण पूर्व चरण में, बीज मिट्टी में सड़ सकता है या अंकुरित बीज पर बीजाणुओं के काले रंग का चूर्ण ढंका होता है, इन बीजाणुओं के कारण अंकुरीत बीजपत्र तेजी से सुखकर नष्ट हो जाते हैं। अंकुरण के बाद के चरण में, गोल हल्के भूरे रंग के धब्बे प्रारम्भ में बीजपत्र पर दिखाई देते हैं और जैसे ही वे बीजपत्र ऊतक या तना को आगे बढ़ाते है, जल आस्क्त धब्बे बन जाते हैं।

प्रबंधन : * फसल का चक्रीकरण।

* खेत में पिछले मौसम के संक्रमित फसल के अवशेष को हटाना और नष्ट करना चाहिए।

* इस बीमारी की रोकथाम के लिए मूंगफली के प्रमाणित बीजों की बुवाई करनी चाहिए।

* बीजों की बुवाई से पहले 5 ग्राम थायरम या 2 ग्राम विटावेक्स

पॉवर या 1.5 ग्राम रैक्सिल प्रति किलोग्राम बीज के हिसाब से उपचारित कर बुवाई करनी चाहिए।

* बीज की बुवाई से पहले जैव फफूंदनाशी ट्राईकोडर्मा का 10 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित करें।

* रोग लक्षण दिखाई देने पर तुरंत मैनकोजेब 3 ग्राम प्रति लीटर पानी का छिड़काव करना चाहिए।

5. स्टेम रॉट

रोगकारक : स्क्लेरोटियम रोल्फसी

लक्षण :

तनों का सड़ना : तने में भूरी या सफेद रंग की सड़न दिखती है, जो धीरे-धीरे पौधों को प्रभावित करती है।

पत्तियों का मुरझाना : पौधों की पत्तियां सिकुड़कर मुरझा जाती है, जिससे पौधा कमजोर हो जाता है।

फूलों का गिरना : संक्रमित पौधों पर फूल जल्दी गिरने लगते है, जिससे उपज में कमी आती है। स्लाइम जैसी संरचनाएं जो तने के आस-पास दिखाई देती हैं, जो संक्रमण को दर्शाती हैं।

प्रबंधन : * फसल चक्र अपनाएं।

* खेत की स्वच्छता बनाए रखें।

* ट्राइकोडर्मा युक्त कम्पोस्ट का प्रयोग करें।

* कार्बेन्डाजिम 1 ग्राम या टेबुकोनाजोल 1 मि.ली. प्रति लीटर पानी का छिड़काव करें।

6. बड नेक्रोसिस रोग

रोगकारक : मूंगफली बड नेक्रोसिस वायरस

लक्षण : नई पत्तियों पर नेक्रोटिक धब्बे बनते हैं। शीर्ष कलिका नष्ट हो जाती है। पौधे बौने रह जाते हैं और फलियां कम बनती हैं।

प्रबंधन : * रोगग्रस्त पौधों को उखाड़ कर नष्ट करें।

* रोगरोधी किस्मों का उपयोग करें।

* थ्रिप्स वाहक कीट का नियंत्रण इमिडाक्लोप्रिड या थायमेथोक्साम से करें।

7. रोसेट रोग

रोगकारक : मूंगफली रोसेट एक वायरल रोग है

लक्षण : यह फसल पर पलने वाले एफिड्स द्वारा फैलता है। फसल में दो प्रकार के लक्षण दिखाई देते हैं : हरा और पीला (क्लोरोटिक)। इस रोग से प्रभावित पौधे बौने और झाड़ीनुमा दिखते हैं। पत्तियों का आकार काफी कम हो जाता है और उन पर धब्बे दिखाई देने लगते हैं। पीले (क्लोरोटिक) रोसेट रोग के लक्षण शुरू में युवा पत्तियों पर हल्के धब्बों के रूप में विकसित होते हैं। बाद में, पत्तियां पीली हो जाती है और उनमें हरी नसें दिखाई देती हैं। जब पौधे छोटे होते हैं और संक्रमित हो जाते हैं, तो उनमें धीरे-धीरे छोटी, विकृत, मुड़ी हुई और पीली पत्तियां उत्पन्न होती हैं। जब पौधे बड़े हो जाते हैं, तो लक्षण आमतौर पर कुछ शाखाओं या पौधे के ऊपरी भाग तक ही सीमित रहते हैं। हरे रोसेट रोग में युवा पत्तियों पर बीच में धब्बे दिखाई देते है और कुछ पत्तियां मुड़ जाती है, लेकिन पत्तियां विकृत नहीं होती हैं। कम उम्र में संक्रमित पौधे गंभीर रूप से बौने और गहरे हरे रंग के हो जाते हैं।

प्रबंधन : * स्वस्थ बीज का प्रयोग करें।

* अंकुरण के 14 दिन बाद पूरे पौधे पर डाइमेथोएट जैसे कीटनाशकों का छिड़काव करें (आमतौर पर 2 लीटर पानी में 5 मिलीलीटर) और फिर कुल चार बार छिड़काव के लिए 10-10 दिन के अंतराल पर छिड़काव करें।

* रोगग्रस्त पौधों को नष्ट करें।

8. जीवाणु जनित मुरझान

रोगकारक : जीवाणु विल्ट रोग रालस्टोनिया सोलानासेरम नामक जीवाणु के कारण होता है।

लक्षण : यह जीवाणु मूंगफली के पौधे को जड़ों के माध्यम से संक्रमित करता है और फिर पूरे पौधे में फैल जाता है, जिससे पौधा मुरझा जाता है और अंतत: मर जाता है। मूंगफली की जड़ों में जीवाणुजनित मुरझान रोग के लक्षणों में पत्तियों का मुरझाना और पीला पड़ना शामिल है, जिसके बाद पूरा पौधा तेजी से मर जाता है। संक्रमित पौधों की जड़ें भी भूरी और पानी से भीगी हुई दिखाई दे सकती है, साथ ही उनमें से दुर्गंध भी आ सकती है। जैसे-जैसे रोग बढ़ता है, संक्रमित पौधों की पत्तियां भूरी होकर सूखने लगती है और अंतत: पौधा मुरझा सकता है।

प्रबंधन : * रोगमुक्त बीज एवं खेत का चयन करें।

* 3 से 4 वर्ष का फसल चक्र अपनाएं।

* जल निकास की उचित व्यवस्था रखें।

* संक्रमित पौधों को निकाल कर नष्ट करें।

* जैव नियंत्रण हेतु स्यूडो-मोनास फ्लोरेसेंस एवं ट्राइकोडर्मा का प्रयोग करें।

सब्जियों की पौधशाला तैयार करने की वैज्ञानिक विधि

सब्जियों के बीजों को जब चयनित उपयुक्त छोटे स्थान पर कुशल प्रबन्धन से अंकुरित करके छोटे पौधे विकसित किये जाते हैं, तो उस स्थान को पौधशाला (नर्सरी) का नाम दिया जाता है। जब अंकुरित हुये पौधे विकसित होकर एक निश्चित अवस्था ग्रहण कर लेते हैं, तब इन पौधों का मुख्य खेत में रोपण किया जाता है। आमतौर से सब्जी उत्पादकों के द्वारा पनीरी तैयार करते समय उचित सावधानी एवं वैज्ञानिक विधि का प्रयोग नहीं किया जाता है, जिसके कारण तैयार होने वाली पौध तथा उसका उत्पादन भी प्रभावित होता है। टमाटर, बैंगन एवं मिर्च, पपीता आदि की पौध में नर्सरी अवस्था से वायरस जनित बीमारियां जैसे लीफ कर्ल व मोजेक तथा नीमाटोडस का प्रकोप हो जाता है। प्रभावित पौध का मुख्य खेत में रोपण करने के बाद बार-बार कीटनाशक रसायनों का अधिक छिड़काव करने के बाद भी उत्पादकों को अत्यधिक हानि उठानी पड़ती है। अतः किसानों को वैज्ञानिक विधि से पौधशाला में पौध तैयार करनी चाहिये।

किसान भाईयो, सब्जियों की खेती में नर्सरी तैयार करने का विशेष महत्व होता है, आमतौर से टमाटर, बैंगन, मिर्च, केप्सीकम, प्याज एवं गोभी आदि सब्जियों की नर्सरी में पौध तैयार करके रोपाई की जाती है। इन सब्जियों के बीज छोटे, हल्के, मुलायम एवं कीमती होते हैं, इसलिये खेत में सीधी बुवाई करने पर अच्छी तरह नहीं पनपते हैं, क्योंकि ये पौधे बहुत ही कोमल होते हैं, जो प्रारम्भिक अवस्था में अच्छी तरह सीधे खेत में नहीं पनप सकते हैं। अतः ऐसी सब्जियों के बीजों की पौध तैयार करके ही खेतों में रोपण किया जाता है। प्रायः देखा गया है कि किसान भाई स्वस्थ पौध तैयार नहीं कर पाते हैं। पौध नर्सरी अवस्था से ही अस्वस्थ हो जाती है, जिससे रोपण के बाद प्रकोप और अधिक बढ़ जाता है, जिसके नियंत्रण हेतु रसायनों का अधिक प्रयोग करना पड़ता है। परिणामस्वरुप उत्पादन लागत बढ़ जाती है तथा ये रसायन पर्यावरण एवं मानव स्वास्थ्य को प्रभावित करते हैं। स्वस्थ पौध तैयार करने के लिए किसान भाईयों को निम्न कुछ विशेष सावधानियां बरतनी चाहिए :

1. अच्छे जल निकास वाली पोषक तत्वों से भरपूर बलुई दोमट भूमि में ही नर्सरी तैयार करें।

2. भूमि को अच्छी तरह तैयारी करते समय गोबर की खाद व वर्मीकम्पोस्ट का प्रयोग करें।

3. क्षेत्र के लिये सम्भावित कीट एवं बीमारियों की प्रतिरोधी प्रजातियों का चुनाव करके ही बुवाई करें।

4. उपचारित या उपचार के बाद बीज की बुवाई करें।

5. मौसम के अनुसार क्यारियां बनाएं। वर्षा ऋतु में 10-15 सैंटीमीटर उठी हुई तथा गर्मियों में समतल क्यारियां बना सकते हैं। क्यारियों की चौड़ाई 1 मीटर तथा लम्बाई सुविधानुसार 5-10 मीटर रख सकते हैं। क्यारियों के बीच में कर्षण क्रियाएं करने के लिए 30 सैंटीमीटर की मेंढ छोड़ें।

6. फार्मलीन का (1:100) घोल बना कर 5 लीटर प्रति वर्ग मीटर की दर से भूमि का उपचार करें तथा उपचारित क्यारियों को 1 सप्ताह के लिए पोलोथीन शीट या बोरियों आदि से ढक दें। 2-3 दिन तक क्यारियों को खुला छोड़ने के बाद ही बीज की बुवाई करें।

7. बीज की बुवाई जहां तक सम्भव हो सके, 5-8 सैंटीमीटर की दूरी पर बनायी गई कतारों में बालू मिलाकर समुचित दूरी पर करें। बीज की गहराई आकार के आधार पर 1-2 सैंटीमीटर रखें। आवश्यकतानुसार बुवाई के बाद उपर से गोबर की खाद की पतली तह भी बिछा सकते हैं।

8. बिजाई के बाद क्यारियों को घास फूंस से ढ़क दें, जिससे नमी भी सुरक्षित रहेगी तथा सिंचाई करने पर बीज भी विचलित नहीं होंगें। जमाव होने तक फुबारें से सिंचाई करें। पौध के विकसित होने पर खुला पानी भी दिया जा सकता है।

9. अगेती व पछेती तथा प्रतिकूल मौसम में पौध तैयार करने के लिए ग्रीन हाउस, लो-टनल तथा शैडिंग नेट आदि का प्रयोग करें।

10. नर्सरी अवस्था में कीट नाशक एवं फफूंदी नाशक दवा के 2-3 छिड़काव एक सप्ताह के अन्तराल पर करें।

11. आर्द्रगलन से पौध को बचाने के लिए बाविस्टीन 2-3 ग्राम प्रति लीटर पानी का घोल बनाकर सिंचाई करें तथा झुलसा से बचाने के लिए इण्डोफिल एम-45 2-3 ग्राम प्रति लीटर पानी का घोल बनाकर छिड़काव करें।

12. पत्ते पीले पड़ने की अवस्था में 1 प्रतिशत यूरिया का छिड़काव फंजीसाइड के साथ किया जा सकता है।

13. पौध की रोपाई 30-40 दिन बाद जब पौध 3-4 सच्ची पत्ती वाली 10-15 सैंटीमीटर लम्बी हो जाये तब करें।

14. पौध की रोपाई के एक सप्ताह पहले कठोरीकरण आवश्यक है। जिसमें सिंचाई बन्द कर देते है तथा शैड हटा देते है। जिससे प्रतिकूल मौसम के प्रति सहनशीलता बढ़ती है।

15. रोपाई के एक दिन पहले सिंचाई करके पौध निकालकर वर्षा वाले दिनों में या सिंचाई किये हुए खेत में सांयकाल रोपाई करके पुनः सिंचाई कर दें।

16. पौध को उखाड़ने के बाद इसकी जडों का फफूंदी नाशक दवा एवं रुट हारमोन्स से उपचार कर सकते हैं।

17. रोपाई के बाद भी 8-10 दिन के अन्तराल पर कीट एवं फफूंदी नाशक के 2 छिड़काव अवश्य करें।

सरकार ने किसानों को दी बड़ी सौगात, प्याज़ की खरीद कीमत में 13 प्रतिशत की बढ़ोत्तरी

सरकार ने बफर स्टॉक के लिए प्याज़ की खरीद कीमत 13 प्रतिशत बढ़ाकर 2,125 रुपए प्रति क्विंटल कर किसानों को सौगात दी है।

सरकार के इस कदम का उद्देश्य खरीद बढ़ाना और किसानों को बेहतर रिटर्न उपलब्ध कराना है। इससे पहले बफर स्टॉक के लिए प्याज़ की कीमत 1,875 रुपए प्रति क्विंटल थी। एक आधिकारिक बयान के अनुसार प्याज़ खरीद की नई दरें 4 जुलाई से लागू हो गई हैं।

बताते चलें कि मौजूदा सत्र में खरीद कीमत में ये 5वीं बढ़ोत्तरी है, क्योंकि कीमत स्थिरीकरण कोष के तहत 2026 के बफर स्टॉक के लिए सरकार की प्याज़ खरीद की शुरूआत धीमी रही है। खरीद की कीमत में बार-बार बढ़ोत्तरी के बावजूद 1 जून से अब तक केवल 2000 टन प्याज़ ही खरीदा गया है।

सत्र शुरू होने के बाद से प्याज़ खरीद की कीमत तेज़ी से बढ़ी है। ये 12.70 रुपए प्रति किलो से बढ़ कर 22 मई को 15.80 रुपए प्रति किलो हो गई। वहीं 13 जून को 16.50 रुपए प्रति किलो, 20 जून को 17.30 रुपए प्रति किलो और उसके बाद 18.75 रुपए प्रति किलो पहुंच गई। अब इसे बढ़ा कर 21.25 रुपए किलो (2,125 रुपए क्विंटल) कर दिया गया है।

307.37 लाख टन रह सकता है प्याज़ का उत्पादन

कृषि और किसान कल्याण विभाग के 2025-26 के दूसरे अंतिम अनुमान के अनुसार प्याज़ का उत्पादन 307.37 लाख टन रहने का अनुमान है, जो 2024-25 के 307.67 लाख टन के लगभग बराबर है। उपभोक्ता मामलों के मंत्रालय ने कहा कि इस समय कुल उपलब्धता कोई चिंता का विषय नहीं है। हालांकि, सामान्य मौसमी रुख के अनुसार कीमतें थोड़ी बढ़ सकती हैं।

देश के पास प्याज़ का पर्याप्त भंडार उपलब्ध

महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश और गुजरात में भंडार का स्तर पर्याप्त बना हुआ है और जमा किए गए प्याज के भंडार में कमी का कोई संकेत नहीं है।

अखिल भारतीय स्तर पर मंडियों में दैनिक आधार पर आवक 50,000 टन से ज्यादा रही है। इसमें अकेले महाराष्ट्र से 30,000 टन से ज्यादा आवक हुई और औसत मॉडल कीमत लगभग 18 रुपए किलो रही। अखिल भारतीय औसत खुदरा कीमत 31 रुपए किलो है।

बेहतर गुणवत्ता वाले भंडार को अभी भी स्टोर में रखा जा रहा है और ऐसी संभावना है कि उन्हें कम आपूर्ति वाले समय में बाज़ार में लाया जाएगा। मौनसून में देरी और कुछ इलाकों में सामान्य से कम बारिश की वजह से कुछ कारोबारियों ने सट्टेबाजी के लिए खरीद शुरू कर दी है।

वहीं मौजूदा कीमतों पर मुख्य खपत वाले केन्द्रों में असल मांग अभी भी कम बनी हुई है।

जून में 1.5 लाख टन प्याज़ का हुआ निर्यात

नासिक और मध्य प्रदेश के कुछ हिस्सों जैसे उत्पादन केन्द्रों में सट्टेबाजी वाली कारोबारी गतिविधियां देखी जा रही हैं। प्याज़ का निर्यात जून में सामान्य रहा और इस दौरान लगभग 1.50 लाख टन प्याज़ बाहर भेजा गया।

हालांकि, कारोबारियों को उम्मीद है कि जल्द ही निर्यात की रफ्तार धीमी हो सकती है, क्योंकि पाकिस्तान और चीन से आने वाली सस्ती और ताज़ी फसलें खाड़ी देशों, श्रीलंका और सुदूर पूर्व जैसे महत्वपूर्ण बाज़ारों में भारतीय प्याज़ को कड़ी प्रतिस्पर्धा दे रही हैं।

यूपीएल ने छत्तीसगढ़ में लॉन्च किया 'राइसब्यूक्स'

धान किसानों को मिलेगा उन्नत खरपतवार नियंत्रण समाधान

फसल सुरक्षा और खेती व्यापार के क्षेत्र में दुनिया भर में अपना नाम कमाने वाली कंपनी, यूपीएल सस्टेनेबल एग्री सॉल्यूशंस ने भारतीय बाजार में एक क्रांतिकारी कदम उठाया है। कंपनी ने आधुनिक धान की खेती को ध्यान में रखते हुए अपना नया और उन्नत खरपतवार नाशक 'राइसब्यूक्स' बाजार में लाने की घोषणा की है। यह नया उत्पाद यूपीएल की मजबूत शोध क्षमता और किसानों को अत्याधुनिक तकनीकी समाधान देने की प्रतिबद्धता का एक बेहतरीन उदाहरण है। इस प्रभावी शाकनाशी को 10 से भी ज्यादा सालों के समर्पित अनुसंधान एवं विकास के बाद तैयार किया गया है। इतना ही नहीं, बाजार में लाने से पहले भारत के प्रमुख धान उत्पादक राज्यों में कई स्थानों पर इसका बड़े पैमाने पर कड़ा परीक्षण किया गया है, ताकि किसानों को फसल सुरक्षा का सबसे भरोसेमंद और सटीक साधन मिल सके।

धान की खेती में आज के समय में किसानों को अनियमित बारिश और मजदूरों की कमी के कारण खरपतवार नियंत्रण में बहुत बड़ी दिक्कतों का सामना करना पड़ रहा है। लगातार बढ़ती मजदूरी के चलते किसान अब फसलों के उगने के बाद छिड़के जाने वाले शाकनाशकों पर ज्यादा निर्भर हो रहे हैं। इस वजह से कई बार सही नतीजे पाने के लिए उन्हें अलग-अलग दवाओं को एक साथ मिलाना पड़ता है, बार-बार स्प्रे करना पड़ता है या फिर जरूरत से ज्यादा मात्रा में दवाओं का इस्तेमाल करना पड़ता है। इसके साथ ही, इचिनोक्लोआ क्रुसगल्ली (सांवा घास) और साइपरस इरिया और डिफॉर्मिस (मोथा प्रजाति) जैसे जिद्दी खरपतवार लगातार फैल रहे हैं, जिन पर काबू पाना अब बेहद मुश्किल होता जा रहा है।

आज के बदलते दौर में किसानों के सामने कई नई चुनौतियां आ खड़ी हुई हैं, जिसके कारण खरपतवार को ज्यादा असरदार तरीके से नियंत्रण में लाने वाले आधुनिक समाधानों की मांग लगातार बढ़ रही है। हमारे किसान भाई अब एक ऐसे ऑल-इन-वन समाधान की तलाश में हैं जो घास, सेज और चौड़ी पत्ती वाले सभी खरपतवारों को एक ही बार में पूरी तरह खत्म कर सके। वे एक ऐसा सुरक्षित और भरोसेमंद विकल्प चाहते हैं जो उनकी मुख्य फसल को बिना कोई नुकसान पहुंचाए इस्तेमाल करने में बेहद आसान हो, फसल की पैदावार बढ़ाए और खेतों में उनके काम के बोझ को कम करके लगातार शानदार नतीजे दे।

इन जरूरतों को पूरा करने के लिए 'राइसब्यूक्स' को विशेष रूप से विकसित किया गया है। यह एक स्मार्ट, ब्रॉड-स्पेक्ट्रम और क्रमबद्ध शाकनाशी है, जिसका इस्तेमाल फसल उगने के बाद शुरुआती दौर में किया जाता है। इसकी सबसे बड़ी खासियत यह है कि इसमें प्रोपेनिल और पेनॉक्ससुलम जैसे दो प्रमाणित सक्रिय घटकों का एक अनोखा मिश्रण है। ये दोनों घटक अलग-अलग तरीकों से काम करते हुए धान के खेतों में उगने वाले मुख्य खरपतवारों, जैसे कि जिद्दी घास और सेज पर बेहद मजबूत और भरोसेमंद नियंत्रण प्रदान करते हैं।

इस खास शुभारंभ के अवसर पर शाकनाशी विभाग के प्रमुख बिस्वजीत बोराह ने 'राइसब्यूक्स' को एक स्मार्ट और आधुनिक समाधान बताया। उन्होंने कहा कि यूपीएल की बेहतरीन अनुसंधान क्षमता और उन्नत तकनीक के दम पर विकसित किया गया यह उत्पाद धान की खेती करने वाले किसानों के लिए खरपतवार प्रबंधन को बेहद आसान और सुरक्षित बना देगा। उनका मानना है कि यह नया नवीनीकरण न सिर्फ खरपतवारों पर सटीक और असरदार नियंत्रण रखेगा, बल्कि किसानों को बिना किसी चिंता के फसलों की सुरक्षा और बेहतर पैदावार हासिल करने में भी पूरी मदद करेगा।

उन्होंने आगे कहा कि यूपीएल हमेशा अनुसंधान और उन्नत तकनीक में निवेश करने के लिए प्रतिबद्ध है ताकि किसानों की हर बदलती जरूरत को समय पर पूरा किया जा सके। इसी कड़ी में बाजार में लाया गया 'राइसब्यूक्स' उत्पाद धान उत्पादकों के लिए बेहद फायदेमंद साबित होने वाला है। किसानों की सुविधा के लिए यह नया समाधान यूपीएल के मजबूत वितरण समूह के माध्यम से छत्तीसगढ़, पश्चिम बंगाल, आंध्र प्रदेश, तेलंगाना और तमिलनाडु जैसे देश के प्रमुख धान उत्पादक राज्यों में बिक्री के लिए उपलब्ध करा दिया गया है।

एक पेड़ की कीमत

- एक सामान्य पेड़ साल भर में करीब 20 किलोग्राम धूल सोखता है।
- हर साल करीब 700 किलोग्राम ऑक्सीजन का उत्सर्जन करता है।
- प्रति वर्ष 20 टन कार्बन डायऑक्साइड को सोखता है।
- गर्मियों में एक बड़े पेड़ के नीचे औसतन चार डिग्री तक तापमान कम रहता है।
- 80 किलोग्राम पारा, लीथियम, लेड आदि जैसे ज़हरीली धातुओं के मिश्रण को सोखने की क्षमता।
- हर साल करीब 1 लाख वर्ग मीटर दूषित हवा फिल्टर करता है।
- घर के करीब एक पेड़ अकॉस्टिक वॉल की तरह काम करता है। यानी शोर/ध्वनि को सोख लेता है।

घर के पास 10 पेड़ हैं तो जीवन 7 साल बढ़ सकता है

- विस्कॉसिन विश्वविद्यालय ने अध्ययन में बताया है कि जिनके घरों के पास पेड़ होते हैं, उनको तनाव और अवसाद की आशंका कम होती है।
- कैनेडा के जर्नल साइंटिफिक रिपोर्ट्स के अनुसार घर के पास अगर 10 के करीब पेड़ हैं जो जीवन 7 साल बढ़ सकता है।
- इलिनॉय यूनिवर्सिटी ने रिसर्च में बताया है कि घर के पास पेड़ हैं तो नींद अच्छी आती है। विशेषकर वृद्धावस्था में।

पैरिशेबल फलों की रिकॉर्ड रेल ढुलाई से फिरोज़पुर मंडल बना देश का प्रमुख लोडिंग हब

अमृतसर, लुधियाना, जालंधर सिटी से एस.एल.आर. से देश भर में भेजी जा रही फलों की खेप

फिरोजपुर रेल मंडल के मंडलरेल प्रबंधक संजीव कुमार के मार्गदर्शन में फिरोज़पुर मंडल पैरिशेबल फलों की ढुलाई के क्षेत्र में लगातार नए कीर्तिमान स्थापित कर रहा है। मंडल के प्रमुख रेलवे स्टेशन अमृतसर, लुधियाना और जालंधर सिटी से, अब एस.एल.आर. के साथ-साथ वी.पी. के माध्यम से भी बड़ी मात्रा में फलों की खेप देश के विभिन्न राज्यों में भेजी जा रही है। रेलवे द्वारा उपलब्ध करवाई जा रही त्वरित, सुरक्षित और किफायती परिवहन सुविधाओं का लाभ अब छोटे व्यापारी भी उठा रहे हैं। कई छोटे व्यापारी बड़े फल व्यापारियों के साथ मिल कर अपने पेरिशेबल फलों की खेप रेल मार्ग से देश के विभिन्न बाज़ारों तक भेज रहे हैं। इससे उन्हें व्यापक बाज़ार उपलब्ध होने के साथ-साथ परिवहन लागत में भी कमी आई है। रेल परिवहन के प्रति बढ़ते विश्वास के चलते फिरोज़पुर मंडल पेरिशेबल फलों की ढुलाई के लिए एक महत्वपूर्ण लोडिंग हब के रूप में तेज़ी से उभर राह है। जून 26 के दौरान अमृतसर से चेरी और लीची की खेप बांद्रा टर्मिनस (मुंबई), सूरत, वडोदरा आदि शहरों में भेजी गई, जबकि लीची एवं नाशपाती हावड़ा/कोलकाता के लिए रवाना की गई।

वहीं लुधियाना से लीची की खेप बीना, भोपाल, बांद्रा टर्मिनस, पटना, सूरत, पुणे एवं कानपुर तथा जालंधर सिटी से बीना, नागपुर और रायपुर तक भेजी गई। अमृतसर स्टेशन से एस.एल.आर. एवं वी.पी. के माध्यम से कुल 20410 बॉक्स (309 टन) पैरिशेबल फलों की बुकिंग की जा चुकी है। इसी प्रकार, लुधियाना से कुल 95 बॉक्स (1630 किलोग्राम) एवं जालंधर सिटी रेलवे से कुल 515 बॉक्स (6980 किलोग्राम) पेरिशेबल फलों की बुकिंग दर्ज की गई है।

यूरोप के 23 देशों में रिकॉर्ड-ब्रेकिंग हीटवेव

यूरोप में गर्मी से 11 लाख करोड़ रुपए का नुकसान; अगले साल 34 प्रतिशत आबादी पानी को तरसेगी

यूरोप में इस साल गर्मी सिर्फ मौसम की मार नहीं रही, यह अर्थव्यवस्था, पानी और लोगों की जिंदगी पर सीधा हमला बन गई। यूरोप के 23 देशों में रिकॉर्ड ब्रेकिंग हीटवेव दर्ज की गई। कई हिस्सों में तापमान 40 डिग्री सैल्सियस के पार पहुंचा और कई शहरों में अपतालों, बिजली ग्रिड, परिवहन और खेती पर दबाव बढ़ गया। अलग-अलग अनुमानों में इस गर्मी से 20 हज़ार से ज्यादा मौतों का दावा किया जा रहा है।

भीषण गर्मी का यूरोप पर गंभीर आर्थिक असर भी पड़ा है। एलियांज रिसर्च के मॉडल की गणना के अनुसार हीटवेव से यूरोप की अर्थव्यवस्था को 11 लाख करोड़ रुपए तक का झटका लग सकता है। 2030 तक यूरोप को 61 लाख करोड़ रुपए तक का आर्थिक नुकसान सहना पड़ सकता है। इसकी सबसे बड़ी वजह उत्पादकता में गिरावट, बिजली की मांग में उछाल, फसल नुकसान, पर्यटन पर असर और इन्फ्रास्ट्रक्चर पर बढ़ता दबाव है।

विशेषज्ञों के मुताबिक संकट यहीं नहीं रुकेगा। यूरोपीय पर्यावरण एजेंसी का अनुमान है कि अगले साल तक यूरोप की करीब 34 प्रतिशत आबादी जल संकट की चपेट में आ सकती है। दक्षिण यूरोप में यह संकट और गहरा होगा, जहां गर्मियों में पानी की मांग खेती, उद्योग, पर्यटन के बीच टकराव पैदा कर सकती है।

भीषण हीटवेव के पीछे ओमेगा ब्लौक, इसमें गर्म हवा फंस कर बढ़ा रही तबाही

*** ओमेगा ब्लॉक क्या पैटर्न होता है?**
यह मौसम का ऐसा पैटर्न है, जिसमें हाई प्रेशर सिस्टम दो लो-प्रेशर सिस्टम के बीच फंस जाता है। इसका आकार ग्रीक अक्षर ओमेगा जैसा दिखता है।

*** इस पैटर्न से गर्मी क्यों बढ़ने लगती है?**
हाई-प्रेशर सिस्टम गर्म हवा को एक जगह रोक देता है। बादल कम बनते हैं, बारिश रुकती है और ज़मीन लगातार गर्म होती रहती है। इससे यह संकट होता है।

*** यूरोप की हीटवेव इस पैटर्न से कैसे जुड़ी है?**
ओमेगा ब्लॉक ने उत्तरी अफ्रीका और भूमध्यसागर की गर्म हवा को यूरोप के ऊपर रोक दिया। इसलिए कई देशों में तापमान 40 डिग्री या उससे ऊपर रहा।

*** इस पैटर्न से और क्या असर पैदा होता है?**
जहां हाई प्रैशर रहता है, वहां गर्मी और सूखा बढ़ता है। लो-प्रेशर में भारी बारिश-बाढ़ का खतरा रहता है।

*** जलवायु बदलाव से खतरा क्यों बढ़ गया है?**
ओमेगा ब्लॉक पहले भी बनते थे, लेकिन अब धरती ज्यादा गर्म है। इसलिए ऐसे पैटर्न में फंसी हवा पहले से ज्यादा गर्म और जानलेवा होने लगी है।

*** ओमेगा ब्लॉक हीट डोम से कैसे अलग है?**
हीट डोम गर्म हवा को ढक्कन की तरह दबाता है। ओमेगा ब्लॉक मौसम को आगे बढ़ने से रोकता है। दोनों साथ हों तो गर्मी लंबी और खतरनाक हो जाती है।

यूरोप के 20 प्रतिशत घरों में ही एसी; इसलिए भी संकट ज्यादा

* यूरोप में हीटवेव इसलिए भी ज्यादा घातक साबित हो रही है, क्योंकि वहां सिर्फ 20 प्रतिशत घरों में ही एसी हैं। अमेरिका में एसी 90 प्रतिशत से भी ज्यादा घरों में है।

* यूरोप की ज्यादातर इमारतें ठंडे मौसम के हिसाब से बनी हैं। इसलिए 30 डिग्री से ऊपर तापमान पहुंचने पर घर, अस्पताल और नर्सिंग होम तक गर्म हो जाते हैं। रात में तापमान न गिरने से बुजुर्गों, बच्चों और बीमार लोगों पर खतरा और बढ़ जाता है।

भारत में 45 डिग्री झेल लेते हैं, फिर यूरोप में 36 डिग्री आफत क्यों?

भारत में 45 डिग्री तापमान सूखी गर्मी में होता है, इसलिए पसीना जल्दी सूख कर शरीर को ठंडा करता है। यूरोप में 36 डिग्री गर्मी भी उमस के साथ आती है, तो पसीना सूख नहीं पाता और शरीर गर्म रहता है। इसे वेट-बल्ब खतरा कहते हैं। वेट-बल्ब तापमान लंबे समय तक रहे तो स्वस्थ व्यक्ति के लिए भी जानलेवा हो सकता है। इससे हीट स्ट्रोक होता है और दिमाग, किडनी, दिल व लिवर फेल हो सकते हैं।

उछाल... ब्रिटेन में एसी बिक्री 330 प्रतिशत, फ्रांस में 1000 बढ़ी

भीषण गर्मी ने एसी को लग्जरी से जरूरत बना दिया है। ब्रिटेन में एसी की बिक्री 330 प्रतिशत तक बढ़ी, जबकि फ्रांस में मांग 1000 प्रतिशत तक बढ़ गई। तापमान 40 डिग्री पार जाते ही कई बाज़ार में स्टॉक घटने लगा। पंखों व पोर्टेबल कूलर की मांग भी कई गुना तेज़ी से बढ़ी।

13 देशों में गर्मी के रिकॉर्ड टूटे, स्पेन में पारा 45 डिग्री पार हुआ

यूरोप की हीटवेव ने तापमान के रिकॉर्ड तोड़ दिए हैं। कम से कम 13 देशों में जून की गर्मी ने नए रिकॉर्ड बनाए। स्पेन में पारा 45 डिग्री के पार पहुंचा, जबकि फ्रांस, जर्मनी, इटली, स्विट्जरलैंड, नीदरलैंड्स व ब्रिटेन में भी रिकॉर्ड गर्मी दर्ज हुई। कई जगह रिकॉर्ड 2-3 डिग्री के अंतर से टूटे

खाने की सप्लाई पर आने वाला है बड़ा संकट! गोल्डमैन सॉक्स ने जारी की चेतावनी

अमेरिकी निवेश बैंक गोल्डमैन सॉक्स ने एक नई रिपोर्ट में चेतावनी दी है कि दक्षिण-पूर्व एशिया के कई देशों में आने वाले समय में खाने-पीने की चीज़ों की सप्लाई पर दबाव बढ़ सकता है। इससे वहां महंगाई यानी चीज़ों के दाम तेज़ी से बढ़ सकते हैं।

गोल्डमैन सॉक्स ने अपनी रिपोर्ट में यह भी कहा है कि 2026 के अंत में मज़बूत अल-नीनो मौसम पैटर्न आने की संभावना

है। यह एक ऐसी स्थिति होती है, जिसमें बारिश का पैटर्न बिगड़ जाता है। कहीं ज्यादा बारिश होती है, तो कहीं सूखा पड़ जाता है।

अगर ऐसा हुआ तो दक्षिण-पूर्व एशिया के देशों में खेती और ज्यादा प्रभावित हो सकती है। चावल, सब्जियां और अन्य जरूरी फसलों की पैदावार पर सीधा असर पड़ सकता है।

रिपोर्ट के अनुसार इसकी वजह कच्चे तेल और फर्टिलाइज़र की बढ़ती कीमतें भी हैं।

कहा जा रहा है कि पश्चिम एशिया में चल रहे तनाव का असर भी है, जिसका सीधा असर वैश्विक बाज़ारों पर दिख रहा है। तेल महंगा होने से ट्रांसपोर्ट और खेती दोनों की लागत बढ़ जाती है, जिसका असर सीधा खाने की कीमतों पर पड़ता है।

खेती पर बढ़ेगा दबाव

कृषि में इस्तेमाल होने वाली खाद की कीमतें भी लगातार बढ़ रही हैं। इससे किसानों की लागत बढ़ेगी और फसल उत्पादन पर असर पड़ सकता है। अगर उत्पादन कम हुआ, तो बाज़ार में सप्लाई घटेगी और चीज़ें और महंगी हो जाएंगी।

रिपोर्ट में कहा गया है कि थाईलैंड, इंडोनेशिया, फिलीपींस, वियतनाम और मलेशिया जैसे देशों पर इसका ज्यादा असर देखने को मिल सकता है। ये देश पहले से ही खाद्य कीमतों में उतार-चढ़ाव झेलते रहते हैं।

लोगों की जेब पर असर

अगर खाने-पीने की चीज़ें महंगी होती हैं, तो इसका सीधा असर आम लोगों की जिंदगी पर पड़ेगा। रोजमर्रा की जरूरतें जैसे चावल, तेल, सब्जियां और अनाज महंगे हो सकते हैं। इससे महंगाई बढ़ेगी और परिवारों का बजट बिगड़ सकता है।

चीन के वैज्ञानिकों ने विकसित किए खुद चमकने वाले पौधे

चीन के वैज्ञानिकों ने ऐसे पौधे विकसित किए हैं, जो अंधेरे में हल्की रोशनी दे सकते हैं। इन पौधों को रोशनी के लिए बिजली या बैटरी की जरूरत नहीं पड़ती। इस परियोजना का नेतृत्व मैजिकपेन बायो के संस्थापक डॉ. ली रेनहान कर रहे हैं। उनकी टीम ने जुगनुओं और रोशनी पैदा करने वाली फफूंद के कुछ जीन पौधों में डाले हैं। इसी वजह से पौधे रात में हल्का प्रकाश छोड़ते हैं। अब तक ऑर्किड, सूरजमुखी और गुलदाउदी समेत 20 से ज्यादा पौधों की प्रजातियों को इस तकनीक से तैयार किया जा चुका है। हाल ही में चीन के झोंगगुआनछुन फोरम में इन पौधों का प्रदर्शन किया गया। वहां लोगों ने ऐसे फूल देखे जो बिना किसी बल्ब या बिजली के अंधेरे में चमक रहे थे। वैज्ञानिकों का कहना है कि भविष्य में इन पौधों का इस्तेमाल पार्कों, बगीचों और सार्वजनिक जगहों पर किया जा सकता है।

सामान्य देखभाल में बढ़ेंगे ये पौधे

डॉ. रेनहान का कहना है कि उनका सपना ऐसी घाटियां और बगीचे बनाना है, जहां रात में हज़ारों चमकते पैधे दिखाई दें। उनके मुताबिक ऐसा नजारा फिल्म अवतार की दुनिया जैसा लगेगा। वैज्ञानिकों का मानना है कि ये पौधे भविष्य में बिजली की खपत कम करने में मदद कर सकते हैं। इन्हें सिर्फ पानी, खाद और सामन्य देखभाल की जरूरत होती है।

अगर यह तकनीक बड़े स्तर पर सफल होती है, तो शहरों को रोशन करने के लिए बिजली पर निर्भरता कुछ हद तक कम की जा सकती है। इसके लिए वैज्ञानिक अलग-अलग पौधों की प्रजातियों, जैव-रासायनिक प्रक्रियाओं और जीन संपादन तकनीकों पर काम कर रहे हैं।

धान, सब्ज़ियों, फलों के लिए सलाह

मौसम धान के अनुकूल, 15 जुलाई तक पूरी करें पूसा बासमती किस्मों की रोपाई

इन दिनों धान की रोपाई के लिए मौसम अनुकूल रहने की संभावना है। धान की किस्मों की रोपाई 10 जलाई तक पूरी कर लें। पी.आर.-126 की रोपाई 15 जुलाई तक पूरी हो जानी चाहिए। पंजाब बासमती-7, पंजाब बासमती-5, पूसा बासमती-1637, पूसा बासमती-1718 और पूसा बासमती-1121 की रोपाई जुलाई के पहले पखवाड़े में पूरी कर लें। बासमती धान में फुट रॉट (जड़ सड़न) की रोकथाम के लिए रोपाई से पहले पौधों की जड़ों को ट्राइकोडर्मा एस्परेलम (पी.ए. यू. स्ट्रेन) के घोल (15 ग्राम प्रति लीटर पानी) में 6 घंटे तक डुबोकर रखें। लुधियाना स्थित पंजाब खेतीबाड़ी यूनिवर्सिटी (पी.ए.यू.) ने किसानों के लिए एडवाइजरी जारी की।

फलों के पौधे लगाने का अच्छा समय : यह मौसम नींबू वर्गीय फल, आम, लीची, अमरूद, लोकाट, बेर, आंवला और पपीता लगाने के लिए बहुत अच्छा है। यह पपीते के पौधों को खेत में लगाने का भी सही समय है।

* बागों से बारिश का अतिरिक्त पानी निकाल दें, क्योंकि इससे फलों के पौधों खास कर नींबू वर्गीय फलों और पपीते को भारी नुकसान हो सकता है।

सब्ज़ियां... भिंडी की पंजाब सुहावनी, लालिमा किस्में बीजें

इलाके में संभावित बारिश को देखते हुए अगले दिनों में सब्ज़ियों में सिंचाई के प्रति सचेत रहें। मौसम के अनुसार सब्ज़ियों की बुवाई/पौध रोपाई और रसायनों के इस्तेमाल में बदलाव करें।

*** भिंडी :** प्रति एकड़ 4-6 किलो बीज की बुवाई करें। बोने से पहले बीजों को 24 घंटे तक पानी में भिगोकर रखें। भिंडी की 'पंजाब सुहावनी' और 'पंजाब लालिमा' किस्मों की बुवाई शुरू करें, जो येलो वेन मोजेक वायरस के प्रति सहनशील हैं।

*** बैंगन :** एक एकड़ में पौध रोपाई के लिए पौधे तैयार करने के लिए एक मरला क्यारी में बैंगन की पी.बी.एच.आर.-41, पी.बी.एच.आर. -42, पी.बी.एच.-3, पी.बी.एच. -4, पी.बी.एच.-5, पी.बी.एच.-6, पंजाब रौनक, पंजाब भरपूर और पंजाब हिम्मत जैसी हाईब्रिड किस्मों के 300 ग्राम बीज बोएं।

*** फूलगोभी :** फूलगोभी की उपयुक्त अगेती किस्मों की पौध रोपाई 45×30 सैंटीमीटर की दूरी पर की जानी चाहिए।

पानीपत के वन विभाग की नर्सरी में मानसून सत्र में तैयार की गई विभिन्न किस्मों की पौध।

पानीपत में लगेंगे 3.29 लाख पौधे, वन विभाग स्वयं रोपेगा 1.29 लाख

वन विभाग द्वारा इस बार जिले में हरियाली बढ़ाने के उद्देश्य से 3.29 लाख पौधे लगवाए जाएंगे। मानसून सीजन को लेकर विभाग द्वारा डीएफओ पाटिल दीपक प्रभाकर के नेतृत्व में सभी तैयारियां पहले ही पूरी कर ली गई हैं। इन कुल 3.29 लाख पौधों में से वन विभाग स्वयं 1.29 लाख पौधे रोपेगा, जबकि शेष 2 लाख पौधे जिला में स्थित विभाग की 7 नर्सरियों के माध्यम से विभिन्न सरकारी विभागों, स्कूलों, ग्राम पंचायतों, गैर-सरकारी संगठनों (एनजीओ) और आम जनता को मुफ्त वितरित किए जाएंगे ताकि वे भी पौधारोपण अभियान में भागीदार बन सकें। विभाग द्वारा इन 2 लाख पौधों के मुफ्त वितरण का कार्य शुरू कर दिया गया है। वन विभाग की जिला में बिंझौल, खुखराना, नौल्था, उरलाना, भापरा, पट्टी कल्याणा और बहरामपुर गांवों में नर्सरियां हैं, जहां पौधारोपण के लिए पौध पहले से ही तैयार कर ली गई है। इन पौधों की किस्मों में मुख्य रूप से पीपल, बरगद, नीम, पिलखन, सफेदा, क्लोन सफेदा, आम, अमरूद, जामुन, जमोया, आंवला, कटहल और अर्जुन शामिल हैं। उल्लेखनीय है कि बारिश का मौसम पौधारोपण के लिए सबसे उपयुक्त माना जाता है, इसलिए विभाग इसी मौसम में अधिक से अधिक पौधे लगाने और वितरित करने पर ध्यान केंद्रित कर रहा है।